## प्रत्यक्ष प्रभावक पुज्य गुरुमहाराज



ानजी बोथरा के पुत्र सुखलालजी री धर्मपत्नी वेरागन चचळबाई तरफसे

गाम गागालाव (नागोर)

सवत १८७६ सरमा    दीक्षा सवत १९०८ जयपुर * स्वर्ग सवत १९४२ फलोद

# प्रस्तावना ।

जैन धर्म निवृत्ति प्रधान है। उसके उपदेष्टा तीर्थंकरों ने आत्मा और कर्म का स्वरूप बहुत विस्तार से वर्णन करते हुए प्रत्येक प्राणी सांसारिक भोग विलासों से अलग होकर आत्मस्वरूप में अवस्थित होने से परमात्मस्वरूप बन सकता है, इसी पर जोर दिया है। जैन धर्म में ईश्वर या परमात्मापद प्राप्ति का ठेका किसी एक ही व्यक्ति का नहीं मानते हुए प्रत्येक प्राणी को अपने पुरुषार्थ द्वारा मोक्ष प्राप्त कर सकने का विधान है। अत जैन दृष्टिकोण से तीर्थंकरों का वंदन, पूजन और भक्ति उन्हें खुश करने के लिए नहीं पर स्वस्वरूप की प्राप्ति में वे निमित्त कारण हैं यही मान कर की जाती है। उनके दर्शन, वंदन व भक्ति से हमें अपने परमात्मस्वरूप का ज्ञान व भान होता है और उनके बतलाये हुए मार्ग पर चलने से आत्मा परमात्मा बन सकती है। इसीलिये उनके गुणानुवाद रूप हजारों स्तुति-स्तवन जैन कवियों ने बनाये हैं जिनमें से भक्ति के साथ गंभीर तत्त्व विचारणामय चौईस तीर्थंकरों के स्तवनों में श्रीमद् आनंदघनजी की चौवीसी के बाद श्रीमद् देवचंद्रजी रचित चौवीसी, वीसी एवं अतीत चौवीसी का उल्लेखनीय स्थान है।

श्रीमद् देवचंद्रजी खरतर-गच्छ के विद्वान थे। आपका जन्म बीकानेर के निकटवर्त्ती ग्राम में स० १७४६ में हुआ था। स० १७५६ में आपने दीक्षा ग्रहण की। प्रारम्भ से ही आपका झुकाव आध्यात्मिक ज्ञान की ओर अधिक रहा फलत २० वर्ष की यौवनावस्था में आपने वैराग्य और आध्यात्मिक रस से सराबोर "ध्यानदीपिका चौपाई" नामक ग्रन्थ की रचना की। स० १७६६ से स० १८१२ तक, जहा तक आप जीवित रहे—निरंतर जैन तत्त्वज्ञान और आध्यात्मिक विषयों पर ग्रन्थ रचना करते रहे। उन सब का संग्रह श्रीमद् बुद्धिसागर सूरिजी ने करवा कर आध्यात्म ज्ञान

प्रसारक मण्डल पादरा की ओर से श्रीमद् देवचन्द्र भाग १ व २ के रूप में प्रकाशित करवाया है।

श्रीमद् देवचन्द्रजी के वर्त्तमान चौबीसी के स्तवनों पर तो स्वयम् रचित विस्तृत बालावबोध-भाषा टीका प्रकाशित है। पर अतीत चौबीसी और बीसी पर विवेचन प्राप्त न था, इसी कमी की पूर्त्ति आध्यात्मरसिक भावकवर्य मनसुखलालजी एवम् सतोकचन्दजी ने की है। अतीत चौबीसी के तो २१ स्तवन ही उपलब्ध हैं, अत मनसुखलालजी ने अत के ३ स्तवनों की रचना स्वय करके सब पर स० १९६४ दाहोद ग्राम मे बालावबोध रूप व्याख्या बनाई और वहीके सहयोगी शिष्य सतोकचन्दजी न स० १९६६ मे यहीं बीसी पर बालावबोध बनाया। इन दोनों को स० १९६७ मे सतोकचन्दजी ने 'सुमति प्रकाश' नामक सग्रह ग्रन्थ मे प्रकाशित भी कर दिया। उस ग्रन्थ में अन्य रचनाए भी सग्रहीत होने से ग्रथ बड़ा है एवम् अप्राप्य भी है। अत विदुषी आर्या नामानुरूप गुणवती श्री विचक्षणश्रीजी ने श्रीमद् देवचन्द्रजी की इन दोनों रचनाओ को बालावबोध सहित स्वतन्त्र ग्रन्थ रूप मे प्रकाशित करना आवश्यक समझा और उन्ही के प्रयत्न से यह प्रथम पुस्तक प्रकाशित हो रही है एवम् दूसरी का मुद्रण चालू है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में श्री रञ्जनविजय पुस्तकालय की ओर से रु० ५००) और तोलारामजी माणकचदजी सेठी की ओर से माणकचदजी की धर्मपत्नी छगनबाई के नवपद उद्यापन के उपलक्ष मे रु० ३००) सहायतार्थं प्राप्त हुए हैं। अत ये दोनों द्रव्य सहायक धन्यवाद के पात्र हैं। आशा है अन्य सज्जन भी इसी प्रकार की उदारता दिखाकर ऐसे ग्रन्थ रत्नों को सर्वजन सुलभ बनाने में सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

अगरचन्द नाहटा।

# सुविहिताग्रणी स्व० मुनिवर्य सुखसागर जी का जीवन परिचय

महापुरुषों का नाम स्मरण ही महामाङ्गल्यप्रद माना जाता है। जन साधारण के जीवनस्तर को ऊंचा उठाने में महापुरुषों का जीवनचरित्र जितना उपयोगी होता है अन्य कोई भी साधन नहीं होता। शास्त्रवाक्य मार्ग दिखाते हैं और उन आदर्शों के उदाहरण महापुरुष अपनी जीवनी द्वारा उपस्थित करते हैं अत: उनसे अधिक एवं सद्‌प्रेरणा मिलना स्वाभाविक ही है। यही कारण है कि प्रत्येक आस्तिक व्यक्ति महापुरुषों के नाम स्मरण भक्ति एवं पूजादि द्वारा अपने को कृतकृत्य होने का अनुभव करता है।

जैन धर्म में समय समय पर अनेक महापुरुष हुए हैं जिनमें से कईयों का प्रभाव तो अपने समय तक ही अधिक रहा और कईयों का दीर्घकाल तक उनके शिष्य-संतति द्वारा लोकोपकार होता रहा है। यहाँ जिन महापुरुष का परिचय कराया जा रहा है वे द्वितीय प्रकार के हैं उनकी पुण्य परम्परा में आज भी दर्जन से अधिक साधु व २०० के लगभग साध्वियों का विशाल परिवार विद्यमान है जोकि स्थान स्थान पर विहार कर स्वपरोपकार कर रहे हैं। इन महापुरुष का शुभ नाम मुनिवर्य सुखसागरजी था।

श्वे० जैन समाज में सुविहितशिरोमणि जिनेश्वर सूरिजी की संतति खरतर गच्छ के नाम से प्रसिद्ध है। इस गच्छ में १८वीं शती में जिनभक्तिसूरिजी नामक आचार्य हो चुके हैं उनके शिष्य प्रीतिसागरजी के शिष्य अमृतधर्म के शिष्य क्षमाकल्याणजी १९वीं शती के नामाङ्कित विद्वानों में से हैं आपने तत्कालीन

शिथिलाचार से अपने को ऊंचा उठाकर सुविहित मार्ग में नव चेतना का संचार किया था। जन साधारण के उपकार के लिये आपने अनेक उपयोगी ग्रन्थों की रचना की थी। आपके शिष्य धर्मानन्दजी के शिष्य राजसागरजी से चरित्र नायक ने दीक्षा ग्रहण की थी और उनके शिष्य ऋद्धिसागरजी के शिष्य रूप में आप प्रसिद्ध हैं।

स्वर्गीय मुनिवर्य श्री सुखसागरजी का जन्म सं० १८७६ में सरस्वती पत्तन (सरसा) नामक स्थान में हुआ था। आपके पिताश्री का नाम मनसुखलालजी व मातुश्री का नाम जेती बाई था। ओसवाल जाति के दूगड़ गोत्र के आप रत्न थे। आपके यौवनावस्था में प्रवेश से पूर्व ही माता पिता दोनों का वियोग हो गया अतः अपनी बहिन के आग्रह से ये जयपुर में आ गये व गोलछा माणिकचंदजी, लक्ष्मीचंदजी की सहायता से किरायाणे का व्यापार करने लगे। थोड़े समय में ही अपनी व्यवहार कुशलता से आप उनके यहां मुनीम जैसे उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर सुशोभित हो गये।

बाल्यावस्था से ही आप की रुचि धर्म ध्यान की ओर विशेष थी इसीसे पिताश्री के अनुरोध करने पर भी आप ने विवाह करना स्वीकार नहीं किया था व सामायिक पूजा, तपश्चर्यादि में संलग्न रहते थे। सं० १९०६ में जयपुर में मुनि श्री राजसागरजी व ऋद्धिसागरजी का चातुर्मास हुआ। फलतः आपकी धर्मभावना के सींचन का शोभन सुयोग प्राप्त हो गया। अपनी चढ़ती भावना से आपने मुनि-श्री से साधु धर्म स्वीकार करने की उत्कंठा प्रगट की। उन्होंने भी आपको वैराग्यवान् व दीक्षा की उत्कट भावना वाला ज्ञात कर चातुर्मास होने पर भी आपके आग्रह को स्वीकार किया।

नियमानुसार अपने निकट सवन्धियों से चारित्र धर्म स्वीकार करने की अनुमति प्राप्त कर ( भाद्र सु० ५ ) साम्वत्सरिक क्षमत-क्षामणा के माङ्गलिक पर्व के दिन गुरुश्री के पास आपने दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा का महोत्सव उपर्युक्त गोलछा परिवार ने किया । मुनिवर्य राजसागरजी ने प्रवज्या ग्रहण कराते हुए आपको मुनि श्री ऋद्धिसागर का शिष्य व दीक्षा नाम सुखसागर घोषित किया ।

साध्वाचार की समुचित शिक्षा के अनतर मार्गशीर्ष मास में आपकी बड़ी दीक्षा भी हो गई । अब आप जैन सिद्धान्त के विशेष अध्ययन में सलग्न हो गये और थोड़े समय में ही जैनागमों में दक्षता प्राप्त करली ।

आगम वाचना के समय शास्त्रोक्त साधु जीवन से अपने वर्त्तमान जीवन की तुलना करने पर शिथिलता नजर आई अत साध्वाचार की ही खप होने से आपने मुनि पद्मसागरजी व गुणवन्तसागरजी के साथ गुरुश्री से अलग हो कर सं० १६१८ सिरोही में क्रिया उद्धार कर लिया । तदन तर सुविहित मार्ग का प्रचार व तप सयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए सर्वत्र विहार करने लगे । अनुक्रम से तीर्थाधिराज शत्रु जय की यात्रा कर के आप फलोधी पधारे ।

इधर साध्वीजी रूपश्रीजी की शिष्या उद्योतश्रीजी शिथिलाचार से सम्ब ध विच्छेद कर सं० १६२२ में फलोधी आई और आपको योग्य सुविहित गुरु जान कर आप से वासक्षेप लेकर आज्ञानुवर्तिनी हो गई । स० १६२४ में लक्ष्मी बाई दीक्षित होकर उनकी लक्ष्मीश्रीजी के नाम से शिष्या हो गई । स० १६२५ में भगवानदास श्रावक ने गुरुश्री से दीक्षा ग्रहण की और भगवानसागरजी के नाम से वे प्रसिद्ध हुवे ।



॥ ॐ परमगुरुभ्यो नमः ॥

## ॥ महोपाध्याय देवचंद्रजी कृत अतीत स्तवन चौवीशी बालावबोध ॥



### ॥ दोहरा ॥

जिन गुण कीर्त्तन करि करो,
आतम कीर्ति अनंत ॥
शुद्धातमता ध्यावता,
लहु निज पद सुमहत १ ॥
अतीत समयमां जे हुवा,
तीर्थपती चौबीश ॥
तस गुण स्तवि भविजन लहो,
सहजातम सुजगीश ॥ २ ॥
शुद्ध ध्येय ध्याता लहे,
धर्म शुक्ल शुभ ध्यान ॥

परमातम पूजो तरो,
भवि निज सिद्धि विधान ॥ ३ ॥
विघन हरण मगल करण,
जस अतिशय चउतीश ॥
तस पद सेवो भवि रहो,
धर्म मग्न निशदीश ॥ ४ ॥
अक्षय आतम संपदा,
आतम वीर्य अनंत ।
सहज स्वतंत्र प्रयास विण,
प्रगटे शांति अत्यंत ॥ ५ ॥

॥ अथ प्रथम तीर्थंकर श्री केवलज्ञानी जिन स्तवन ॥

नामे गाजे परम आल्हाद, प्रगटे अनुभव रस आस्वाद । तेथी थाये मति सुप्रसाद, सुणता भाजेरे काई विषय विषादरे॥ जिणदा ताहरा नामथी मन भीनो ॥ १ ॥

अर्थ – जेना नामथी भवि जीवोना हृदयमा परम आल्हाद गाजी रहे छे, त्रणे भुवनना जीवो

सिद्ध समान पोतानु शुद्ध स्वरूप अणजाणता
सडण, पडण, विध्वंसण धर्मी अपवित्र-देहमां
पोतापणु जाणी मानी जन्म, जरा, मरणादि आधि
व्याधि अर्हंपणे भोगवता अने मिथ्यात्व, अविरति,
प्रमाद,कषाय वशे कर्मबंध करताने प्रभुजी सिद्ध समान
निर्मल ज्ञान दर्शन चरण चारित्र वीर्यमय स्वतंत्र
अजर अमर अक्षय अनंत आनंदमय शुद्धात्म स्व
रूप बतावे, तेज आत्म अनात्म लक्षण भिन्न सम
जता, रूची प्रतीत थता, भविजीवोना हृदयमां
परमानंद प्राप्ति थाय छे वली रागादि दोषा सर्वे
निर्मल शाश्वत ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि पोताना
अनंत शुद्ध शक्तिनो अनुभव आस्वाद स्वतंत्र पणे
प्रगटे छे एज परम आल्हाद गाजे छे. आ
वचन सांभलता विषय अने कषायोनो निपात,
दूर भागे अने प्रशमतानो आनंद आवे अर्थीका
बारमा अने तेरमा गुणस्थानवासी सामान्यकेवलि
इंद्र सरखा शासन नायक तमारा
मन आश्चर्य पामे छे, माहरू मन प्रभुना
मृत वचन रसे भीनु छे ॥ १ ॥

क्षेत्र असंख्य प्रदेश, अनंत पर्याय निवेरा ॥
जाणग शक्ति अशेष, तेहथी जाणेरे कांई
सकल विशेषरे ॥ जिण ॥२॥

अर्थ–आत्म द्रव्यना प्रदेश, लोकाकाशना असंख्याता प्रदेशमां विस्तरी शके छे ते स्वप्रति प्रदेशे ज्ञानादि अनंत गुणोना अनंत पर्यायो अनंता नंता निरो भावे रह्या छे ते परिणामिक धर्मे षड्गुण हाणि वृद्धिपणे पर्यायो दर समये सामर्थ्यपणे परिणमि आप आपणा कार्यपणे उल्लेलाग आवी परिणमे छे तेमां आविर्भावपणे थया जे ज्ञान पर्यायो ते षड्‌ रूपी अरूपी सकल ज्ञेयनी त्रिकालवर्ती दर निकटनी सकल प्रवृत्तिना जाण छे माटे जाणवापणानी शक्ति अने व्यक्ति अशेष छे एटले अनंत द्रव्यना अनंत क्षेत्रना अनंत कालना अने अनंत भावना प्रभुजी विशेष गुणे करी ज्ञाता छो तेथी कोई पण ज्ञेय तमारा जाणवामां बाकी रहेतो नथी ॥ २ ॥

सर्व प्रमेय प्रमाण, जस केवल नाण
पहाण ॥ तिणे केवलनाणी अभिहाण, जस
ध्यावेरे काई मुनिवर झाण रे ॥ जिण ॥३॥

अर्थः—सकल प्रमेय प्रमाण केहतां पचास्ति द्रव्य छे तेमा धर्मास्ति अधर्मास्ति अने आकाश ए एक एक द्रव्य छे अने जीव पुद्गल अनंतानंत द्रव्य छे अने त्रिकालना समय अनंता छे. तेमाथी कोई द्रव्य वधे नही तेम घटे पण नही एटले नवो उपजे नहीं, अने जे द्रव्यमा जेटला छति पर्याय छे ते पर्यायमाथी कोई पर्याय वधे नही तेम घटे पण नहीं, पर्याय उत्पाद व्ययपणे परिणमे पण सत्ताए जेटला गुणो अने जेटला पर्यायो छे तेटलाज रहे जीव द्रव्यना गुण पर्याय जीव कार्य करे अने पुद्गल द्रव्यना गुण पर्याय पुद्गल कार्य करे पण कोई द्रव्य अन्य द्रव्यना कार्यने करे नही, वस्तुनो जे स्वभाव होय तेना जे पर्यायनो जे समये आववानो होय तेज समये आवे, पण पोतानो क्रम कोई नही चली जेमा जे भवितव्यता होय अगर जेने जेनो योग थवानो होय

योग थाय, ए आदि द्रव्य गुण पर्याय आप आपणी मर्यादा छोडे नहीं तेने प्रमेय कहीए एम सकल प्रमेयनु प्रमाण करनार प्रभुजीनु प्रधान केवलज्ञान छे तेथीज प्रभुजी तमारू केवलनाणी एवुं नाम छे जेने प्रधान मुनिओ सदा मन वचन कायाना जोगो थिर राखी ध्यानमा ध्याय छे एटले तमारा शुद्ध गुणो वार वार संभाली ध्यानाग्नि थकी तुम स्वरूप गुण आत्म अंगमा अभेदपणे ध्याई कर्मरूपी काष्टने प्रजाले छे ॥ ३ ॥

ध्रुव परिणति छनि जास, परिणति परिणमे त्रिक राश ॥ करता पट प्रवृत्ति प्रकाश, अस्ति नास्तिरे काई सर्वनो भासरे ॥ जि० ॥४॥

अर्थ -ते केवलज्ञानी अतीतकालना प्रथम तीर्थंकरने ध्रुव परिणति अस्तिपणे छे तेज परिणति उत्पाद व्यय ध्रुव ए त्रण राशि पणे सर्व समय परिणमे छे एटले सर्व समय पूर्व पर्यायनो व्यय, उत्तर पर्यायनो उत्पाद अने सकल सत्तानु ध्रुवपणु सर्व द्रव्यमा होय जो सर्व समय द्रव्यमांहे उत्पाद व्यय ध्रुवता न मानीए तो द्रव्य पोताना कार्यनी क्रिया करे नहीं तो शुन्यपणु थाय कह्यु छे के-

"अर्थ क्रिया कारित्व 'द्रव्य तथा उत्पाद् व्यय ध्रुव युक्त सत् लक्षण द्रव्यं" एटले द्रव्य आप थापणु कार्य करवानी क्रिया एटले पर्याय प्रवृत्ति न करे तो द्रव्यनु द्रव्यत्वपणु रहे नहीं अने सर्व समय उत्पाद् व्यय न होय तो द्रव्यनु सत् लक्षण पण रहे नहीं माटे उत्पाद् व्यय ध्रुवपणु सर्व समय मानवु तेथी प्रभुजी पोताना शुद्धात्म पदनी प्रवृतिना प्रकाश करवावाला छे वली सर्व द्रव्य पोत पोताना द्रव्य क्षेत्र काल अने भावपणे सदा अस्ति एटले छता छे अने परद्रव्यना द्रव्यादिक पणे कोई द्रव्य थाय नहीं, पर द्रव्यादिक रूपे न थवु एवो स्वभाव पण पोतामा अस्तिपणे रह्यो छ तेनज नास्ति स्वभाव कहीए एम अस्ति नास्ति आदि वस्तुना अनंत स्वभाव समकाल सर्व समय तमारी ज्ञायकतामा भासे छे ॥४॥

सामान्य स्वभावनो बोध, केवल दर्शन शोध ॥ सहकार अभावे रोध, समपना रे कांई बोध प्रबोधरे ॥ जि० ॥ ५ ॥

अर्थ –सर्व द्रव्यना अस्तित्व वस्तुत्व आदि सामान्य स्वभावनु जाणवु तेने दर्शन गुण कहीए ते दर्शन गुण तमारे परम प्रगट शुद्ध थयो छे सामान्यपणे वस्तुनो छती जाणवामां इंद्रियो तथा चंद्रसूर्यादिनी सहायजोईती नथी अने अरोध केहतां ते दर्शन गुण रूपी अरूपी अनंत द्रव्य जाणवाना कोई ठेकाणे रोकातो रूंधातो नथी एटले अस्खलित केवलदर्शन गुण प्रगट थयो छे एटले सामान्य विशेष बोध समयांतरे थयो छे पण अखंड समय केवलज्ञान अने केवलदर्शन उपयोग वर्त्ते छे ॥ ५ ॥

कारक चक्र समग्ग, ते ज्ञायक भाव विलग्ग ॥ परमभाव संसग्ग, एक रातेरे थाई थयो गुण वग्गरे ॥ जि० ॥ ६ ॥

अर्थ –जीवमा अनंता गुणो छे, ते सर्व समय अनंत कार्य करे छे, ते दरेक कार्यना कारक चक्र भिन्न भिन्न छे, ते सर्व कारक चक्र ज्ञान कारक चक्र सबंधे वलगेला छे ज्ञानकारकचक्र फरे तेम दर्शनादि सर्व आत्म कार्यना कारकचक्र फरे ते ज्ञान कार्यना कारक नीचे प्रम.णे जाणवा.—

(१) कर्ता कारक–ते ज्ञान कार्यनो कर्ता पोते आत्मा.

(२) कार्य कारक–स्वपर स्वरूप त्रिकाल भावनु जाणवु ते ज्ञान कार्य

(३) करण कारक–ज्ञान कार्यनु उपादान कारण असंख्य प्रदेशो रहेला ज्ञानना अनंता छति पर्याय. अने ज्ञान कार्यनु निमित्त ज्ञेय

(४) संप्रदान कारक–छति पर्याय सामर्थ्यपणे प्रवर्तावी पोतेज पोताने अनंत बोधनु दान आपे ते स्वसंपदा देवा रूप संप्रदान

(५) अपादान कारक–तेज छति पर्याय सामर्थ्यपणे प्रवर्तावी अबोधनो नाश करवो ते अपादान

(६) अधिकरण कारक–स्वआत्मप्रदेशमां स्वकाल प्रवृत्ति ते अधिकरण

एम अनंत गुणोना अनंत कारकचक्र भिन्न भिन्न समकाले प्रवर्त्ते छे तेथी अनंत गुणोनो चक्र ... थतो एटलो परम भावने संसर्गे सर्व गुणो ... [illegible]

इम सालंबन जिन ध्यान, भविसाधे तत्व विधान ॥ लहे पूर्णानंद अमान, तेह थी थायेरे काई शीव ईशानरे जि० ॥७॥

अर्थ —एम प्रभुना अवलंबने जे भविशुद्धात्म ध्यान राखी तत्त्वविधान साधेएटले प्रभुजीए अनंत गुणोनां कारक चक्रो पोतानाज कार्यमां प्रवर्त्तावी प्रगट आत्मसिद्धि करी तेम माहरु पण आत्मसिद्धि रूप कार्य करवु अगर एज प्रमाणे आत्मसिद्धि करवा माटे प्रभुजीए कर्यु तो माहरु सर्वेगुणो निजात्म शुद्ध कार्यमा प्रवर्त्तावरा एज प्रभुनु आलंबन जाणवु प्रभु आलंबन विना अनादि अविद्या बडे पुद गल द्रव्य गुणपर्याय कार्यमाना ज्ञान गुण तमा प्रवर्त्तावे छे एटले पुद्गल कार्यमा रोके छे, त्याज अपराध छे, पण शुद्धात्म उपयोगमा प्रवर्त्ताव नथी, तेमज दर्शन गुणपण पुद्गलो ६ थी शुभाशुभ अशुद्ध निश्चयमा चरणगुण पण पुद्गलना अनंत प्रवर्त्तावे छे कषायोमां गु वीर्यगुण पण पुद्गलना

मलिन अने परतंत्र करे छे एम पोताना अनंत गुणो परसंगे चलमलिन करी संसार भ्रमण करतो दु:ख पामें छे पण ज्यारे जीव प्रभु आलंबनी थाय त्यारे सकल कारक शुद्ध स्वभाव धर्मना प्रवर्त्तावी सकल दु:खथी निवर्ति परमानंद प्रगट करे छे एम पूरो जेनो माप नथी एहवो अत्यतीक आनंद प्रगट थये छे एटले आत्म उपद्रव रहित परम निर्वाण पदनो जरूर स्वामी थाय छे ॥७॥

दास विभाग अपाय-नासे प्रभु सुपसाय ॥ जे तन्मयताए ध्याय सही ते हवेरे देवचंद्र पद थायरे जि० ॥८॥

अर्थ —हुँ प्रभुनो दास ते प्रभुना आलंबने नथी वर्त्यो त्यासुधी परद्रव्यनी ममता आदि विभाव अनेक प्रकार नु दु:ख देछे ते प्रभु आलंबने सकल विभाव दु:ख दोषनाश थाय माटे प्रभुनोज पसाय जाण वो प्रभुने तन्म यताए के, प्रभु जेम- राग द्वेष आदि तजी शुद्ध स्वभावाचरणमा थिर थया तेमजे भविरागादि विभाव छोडी सह जानंद स्वभावमां थिर थइ एटले तन्मय थइ ध्याय ते

# प्रत्यक्ष प्रभावक पुज्य गुरुमहाराज



...दानजी बोथरा के पुत्र सुम्वलालजी की धर्मपत्नी वेरागन चचळबा... तरफसे ...
ग्राम गोगोलाव (नागोर)

# प्रस्तावना।

जैन धर्म निवृत्ति प्रधान है। उसके उपदेष्टा तीर्थंकरों ने आत्मा और कर्म का स्वरूप बहुत विस्तार से वर्णन करते हुए प्रत्येक प्राणी सांसारिक भोग विलासों से अलग होकर आत्मस्वरूप में अवस्थित होने से परमात्मस्वरूप बन सकता है, इसी पर जोर दिया है। जैन धर्म मे ईश्वर या परमात्मापद प्राप्ति का ठेका किसी एक ही व्यक्ति का नही मानते हुए प्रत्येक प्राणी को अपने पुरुषार्थ द्वारा मोक्ष प्राप्त कर सकने का विधान है। अत जैन दृष्टिकोण से तीर्थंकरों का वदन, पूजन और भक्ति उन्हें खुश करने के लिए नहीं पर स्वस्वरूप की प्राप्ति में वे निमित्त कारण हैं यही मान कर की जाती है। उनके दर्शन वदन व भक्ति से हमें अपने परमात्म-स्वरूप का ज्ञान व भान होता है और उनके बतलाये हुए मार्ग पर चलने से आत्मा परमात्मा बन सकती है। इसीलिये उनके गुणानुवाद रूप हजारों स्तुति स्तवन जैन कवियों ने बनाये हैं जिनमें से भक्ति के साथ गभीर तत्त्व विचारणामय चौईस तीर्थंकरों के स्तवनों में श्रीमद् आनदघनजी की चौवीसी के बाद श्रीमद् देवचद्रजी रचित चौवीसी, वीसी एव अतीत चौवीसी का उल्लेखनीय स्थान है।

श्रीमद् देवचद्रजी खरतर-गच्छ के विद्वान थे। आपका जन्म बीकानेर के निकटवर्त्ती ग्राम में स० १७४६ में हुआ था। स० १७५६ में आपने दीक्षा ग्रहण की। प्रारम्भ से ही आपका झुकाव आध्यात्मिक ज्ञान की ओर अधिक रहा फलत २० वर्ष की यौवनावस्था में आपने वैराग्य और आध्यात्मिक रस से सराबोर ' ध्यानदीपिका चौपाई " नामक ग्रन्थ की रचना की। स० १७६६ से स० १८१२ तक, जहा तक आप जीवित रहे—निरतर जैन तत्त्वज्ञान और आध्यात्मिक विषयों पर ग्रन्थ रचना करते रहे। उन सब का सग्रह श्रीमद् बुद्धिसागर सूरिजी ने करवा कर आध्यात्म ज्ञान

जरूर मङ्गल देवो मा चद्रमा समान शुद्ध सिद्ध
पामे ॥८॥ सपूर्णा.

॥ अथ द्वितीय श्री निर्वाणी प्रभुनु स्तवन

वीरजी प्याराहो वीरजी प्यारा ॥ ए राग ॥

प्रणमुं चरण परमगुरु जिनना, हंस ते मुनि
जन मनना ॥ वासो अनुभव नंदन वनना
भोगी आनंद घनना ॥१॥ मोरा स्वामी हो
तोरो ध्यान धरीजे, ध्यान धरीजे हो सि
वरीजे, अनुभव अमृत पीजे। मोरा स्वा
हो तोरो० ॥ ए आकणी ॥

अर्थ–घनघाती रुप कर्म शत्रुने जीत्या
केवलज्ञानादि चार अनंता जेणे प्रगट कर्या एह
निर्वाणी प्रभु अतित चोवीशीना बीजा तीर्थंक
परमगुरुना चरणकमलने अगर शुद्ध स्वभावाव
पने बहु सन्माने प्रणमु छु जेने मुनिजनो पोतन
मनरुप मानसरोवरमां हस रुपे रमावे छे ह
जेम दूधथी पाणी भिन्न करी दुध पीए छे तेम प्र

अनात्म भावना लक्षण भिन्न जाणी दर्शावी मुनिओने पण अनात्म लक्षणोनो आदर तजावी शुद्धात्म लक्षणमय शुद्धात्म स. दयनो अनुभव करावे छे, वली प्रभु आत्मानी अनत शुद्ध शक्तिरुप नदनवनमा वसे छे, अनत गुणोनी सुवासनामा मग्न तृप्त थई रह्या छे, एम अनत स्वगुण आनद समकाले-भोगवे छे तेथी आनदघन भोगी एहवा माहरा नाथ विभाविक दुःखथी छोडावनार अने परम निवृत्ति स्थानक आनदपुरीमां (शिव नगरीमां) निरवाण पद (निश्चल पद) ना दातार तमारुंज ध्यान धरीए, जगवासी जीव पुद्गल ध्याने, अशुद्ध अध्यवसाये, अशुद्ध लेश्याए, अशुद्ध चेष्टाए विभावमा प्रीति करवे ज्ञानावरणादि कर्म बाधी दीन दुःखी परतन्त्र थई रह्या छे ते देखी हुं भव भयथी उद्विग्न थयो प्रभुनुज ध्यान करु एटले प्रभुनी आणा समय मात्र पण चूकु नहीं ए जिज्ञासा छे तमारुज ध्यान धरीए तो सिद्धि वरीए माटे शुद्धात्म गुणमा उपयोग थिर राखवा अने थिरता वधारवा रुप अनुभव अमृत पीए ॥ १ ॥

सकल प्रदेश समा गुण धारी, निज निज कारज कारी ॥ निराकार अवगाह उदारी, शक्ति सर्व विस्तारी ॥ मोरा० ॥ २॥

अर्थ.-प्रभुजीने असंख्यात प्रदेशो ज्ञानादि अनंत स्वगुणो सरखा छे कोई प्रदेशो कांई गुण पण अंशमात्र ओछा अधिको नथी जेम सोनाना सर्व प्रदेशो भारे पीलाश आकाशादि सर्व गुणो सरखा छे तेम शुद्ध द्रव्यने सर्व प्रदेशो गुणो सरखा होय छे ते दरेक गुणो आप आपणु कार्य सर्व समय निरंतर करे छे कोई गुणनी प्रवृत्ति कोई समय पण रोकाती नथी तेम अन्यद्रव्य कोई द्रव्यना गुणपर्याय प्रवाहने अटकावी रोकी शकतो नथी जेम वर्ण गुण गंध आदि गुणनु कार्य करतो नथी पण वर्ण गुण वर्ण पर्यायप्रवृत्तिरूपज कार्य करे छे तेमज्ञान गुण दर्शन गुण आदि अन्य गुणनु कार्य करतो नथी अर्थात् सर्व गुणो सर्व समय आप आपणु कार्य कर छे पण स्वजाति अन्य गुण के विजाती अन्य गुणनु कार्य कोई गुण कोइ समय पण करतो नथी एम अपरिणामीकता धर्म जाणवो प्रभुनु अंग निराकार

ज्ञायक रूप छे पुद्गलो पेठे वर्णादि वीश गुण रूपे अथवा ते माहेला कोई रूपे पण नथी तेथी कल्याण कारी निराकार अवगाहना छे अवगाहना तो आकाश प्रदेशने रोके तने कहीए प्रभुनी अवगाहना व्यवहारथी आकाश प्रदेशमा कहेवाय पण निश्च यथी तो प्रभु स्वक्षेत्री छ परक्षेत्री नथी जे प्रदेशमा सिद्धनी अवगाहना छे तेज प्रदेशमा अजीव पुद्गल स्कंधा तथा निगोद राशी शरीर विगेरे अनेक द्रव्यो छे पण सिद्धनी अवगाहनाथी ते क्षेत्र रोकातु नथी पण ,व्यवहार नयथी व्यवहार द्रष्टिने समजवा वदले अवगाहना कही पण परमनये जीव अनअवगाही छे, " उक्तच आचारांगे पांचमा अध्ययने उद्देशे छट्ठे कह्यु छेः— से न दीहे, न हस्से, न वट्टे, न तंसे, न चउरंसे, न परिमंडले, न किण्हे न नीले, न लोहिए, न हालिद्दे, न सुक्किल्ले, न सुरभि गंधे, न दुरभि गंधे, न तित्ते, न कडुवे, न कसाये, न आंबिले न महुरे, न कक्खडे, न मउए, न गुरुए, न लहुए, न सीए, न उण्हे, न निध्दे, न लुक्खे, न काऊ, न रुहे, न संग न इत्थि, न पुरिसे, न अन्नहा परिन्ने, सन्नेउवमा निविमइये, अरूवि सत्ता

अवयरस पय नत्थि" एम छे तो साकार अवगा-
हना केम कहेवाय ? आत्मामा अनंत गुणानी
अनंत शक्ति छे ते सर्व शक्ति ससारीक जीवोनी
परभाव अनुयायीपणे रोकाइ छे पण प्रभुजीन तो
सकल परभावनो नाश करी गुण गुणना अनंतानंत
पर्यायनी शक्ति प्रगट करी स्वतंत्रपणे विस्तारी
छे ॥ २ ॥

गुण गुण प्रति पर्याय अनंता, ते अभि-
लाप्य स्वतंता ॥ अनंत गुणानभिलापी सत्ता,
कार्य व्यपार करता ॥ मोरा० ॥ ३

अर्थ –प्रभुजीने अनंता गुणो छे ते गुणगुण प्रते
अनंत पर्याय पोताने स्वतंत्र छे तेमाथी अनंता
पर्यायो अथवा धर्मो वचन आलापमा आवी शके
एवा छे तेने अभिलाप्य धर्म कहिए अने तेथी
अनंतगुणा वचन आलापमा न आवी शके एहवा
अणभिलाप्य धर्म छे ते अभिलाप्य अने अणभि-
लाप्य सर्व धर्मो आप आपणु कार्य दर समय करे
छे. व्यापार क० ते सर्वे पर्यायो कार्य करवामा
प्रवर्त्ते छे एज प्रमाणे पचास्तिकायमा अभिलाप्य

धर्म अनंता अने तेथी अणभिलाप्य धर्म अनंतगुणा जाणवा ॥ ३ ॥

छति अविभागी पर्यय व्यक्ते, कारज शक्ति प्रवर्ते ॥ ते विशेष सामर्थ्य प्रशक्ते, गुण परिणाम अभिव्यक्ते ॥ मोरा० ॥ ४

अर्थः-द्रव्यना प्रत्येक प्रदेशे छति पर्याय अनंता छे ते एक एक पर्याय अविभागी छे एटले ते पर्यायनो कोई प्रकारे विभाग थई शके नहि ने पर्यायो कार्य सन्मुख प्रवर्त्तवाथी सामर्थ्यपणे थाय तेथी कार्य करवानी शक्ति प्रवर्त्ते ते विशेष स्वभाव कहिए ते विशेष गुणोनु सामर्थ्यपणु भिन्न भिन्न शक्तिवालु छे पण जे जे गुणनो जे जे परिणाम ते ते गुण सन्मुख प्रवर्त्ती प्रगट थाय ॥ ४ ॥

निरवाणी प्रभु शुद्ध स्वभावी, अमय निरायु अपावी ॥ स्याद्वादी यम नीगम रागी, पूरण शक्ति प्रभावी ॥ मोरा० ॥ ५ ॥

अर्थः-निश्चल पदने पाम्या एवा निर्वाणी प्रभुना विशेष स्वभाव पूर्ण शुद्ध थया छे ते

निर्भय छे संसारी जीवो चार गतिमा आउख्खानी स्थिति सुधी रहे छे अने मरणाते अन्य स्थानके जाय छे पण प्रभुने तो सिद्ध क्षेत्र छोडी अन्य स्थानके जवुं परंतु नथी तेथी आयुष्यने भावे नथी पण सादि अनंत स्थिती छे सकल पाप दोष रहित परम पवित्र छे निश्चय स्याद्वाद सत्ताना भोगी छे पोतानी अनंत पर्यायप्रवृत्ति चाकमा राज्य करता राजी छे सर्व शक्ति निरावरण थई तेथी पूर्ण शक्ति प्रभाववत छे ॥ ५ ॥

अचल अखड स्वगुण अरामी, अनतानंद विसरामी ॥ सकल जीव खेदज्ञ सुस्वामी, निरामगधी आकामी ॥ मोरा० ॥ ६ ॥

अर्थ.-प्रभुना अनत गुणो चलाचल रहित थया, भाव वीर्य पूर्ण गुणोमा अचल अक्षय प्रवर्त्युं तेथी कोइ गुण के कोइ पर्याय खडाय चलाय नहीं, सव गुणाना पर्यायनो अखड प्रवाह वहे तेथी गुणो के पर्यायो व्यय पामे नहीं एटले सर्व समय गुणो अने पर्यायो कायम रहे पण विणशे खूटे नहीं मात्र आवीर्भाव तिरोभाव थया करे पूर्व पर्यायनो व्यय

अने उत्तर पर्यायनो उत्पाद सर्वे समय थया करे पण ते पर्यायो सर्व समय छति रुप कायम होय माटे द्रव्य ध्रुव गवेष्या छे एवा निर्मल गुणोमा प्रभु एकांतिक अत्यंतिक आनंद भोगवे छे एम अनंत आनंदमा विश्राम लीधो छे प्रभु सर्वे संसारी जीवोना खेदज्ञ छो एटले सर्वे जीवो सत्ताए सिद्ध समान छे तोपण अनादि अविद्याए पोतानी आत्मशुद्धना अणजाणता देहादि अथिर अने परतंत्र पुद्गल पर्यायनी ममताए जन्म जरा मरण राग शोग कषाय अज्ञान मिथ्यात्वादिके क्लेशित परतंत्रता वशे क्षण मात्र पण विराम पामता नथी एवा खेदयुक्त जीवोने देखी प्रभु तेमनो खेद टालवा माटे शुद्ध नये शुद्ध स्वरुप दर्शावी आठे कर्मजन्य दुःखथी मुकावा अर्थे भव्योने मोक्षमार्गमा प्रेरणा करावे छे तेथी खेदज्ञ छे. निश्चय नयथी प्रभु कोई अन्य द्रव्यना स्वामी नथी पण सुस्वामी एटले पोताना ज्ञानादि अनंतगुण पर्यायना स्वामी छे व्यवहार नयथी पोतानी आज्ञा पालक सेवकोने चार गति भ्रमणथी छोडावे अने ज्ञानदर्शन चरण अनंतवीर्य अव्याबाधादि स्वतंत्र सुख आपे माटे

सुस्वामी के० रुडा स्वामी के अशुची पुद्गलनी गंध रहित अने कोई पण अन्य वस्तुना कामी नथी कामना तो अधुराने होय अने परमेश्वर तो परम गुणी पूर्णनंदीने कोई प्रकारनी कामना रहि नथी ॥६॥

निःसंगी सेवनथी प्रगटे, पूर्णानंदी ईहा ॥ साधन शक्ते गुण एकत्वे, सीधे साध्य स मीहा ॥ मो.स्वा० ॥ ७ ॥

अर्थ –एहवा निःसंगी के० सकल परद्रव्य संग रहित सहज स्वभावानंदी प्रभुनी द्रव्य भाव सेवा करनारने पूर्णानंद करवावाली शुद्ध तत्त्वरुची प्रगट थाय ते तत्त्वरुची उपनेथी आत्मलब्धि वीर्य प्रगट थई पूर्णानंद प्रगट थाय. साधन शक्तियडे परिणति गुणथी अभेद करे एटले परपरिणति त्यागी साध्य सिद्ध करवाना जे इच्छा हती ते पूर्ण साध्य सिद्ध करे एटले सिद्धता पामे ॥ ७ ॥

पुष्ट निमित्तालंबन ध्याने, सालंबन लय ठाने ॥ देवचंद्र गुणने एक ताने, पहोंचे पूरण थाने ॥ मोस्वा० ॥ ८ ॥

अर्थः– प्रभुजी तमे मोक्षाभिलाषीने पुष्ट आलंबन छो एटले जेम प्रभुए ज्ञानदर्शन चरण वीर्यादि आत्मगुणो पुद्गलीक कार्यमांथी पाछा वाली सहजात्म कार्यमा जोड्या अने भव्य जीवोने सर्वे शक्ति सहजात्मकार्यमा प्रयुजवी दर्शावीए बंने प्रकारे प्रभुनु आलंबन लेई जे वर्त्ते ते आखर निरालंबन पामे एटले ते जीवने कोई समय पण पुद्गलीक आलंबन लेवु पडे नहीं. पर आलंबन लय थाय चारनिकायना देवोमां चंद्रमा समान निर्वाणी प्रभुना स्वरूप ज्ञानादि शुद्ध गुणोमां एकतापणे उपयोग धरावे करे एटले शुद्ध गुणोना गुण बहु माने पूर्णानंद स्थानके पहोंचे ॥ ८ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ श्री तृतीय सागर प्रभु जिन स्तवन ॥

॥ चउमासी पारणु आवे ॥ ए राग ॥

गुण आगर सागर स्वामी, मुनि भाव
जिवन नि कामी ॥ गुण करणे कर्त्तृ प्रयोगी,

प्राग्भावी सत्ता भोगी ॥ १ ॥ सुहकर भव्य ए जिन गावो, जिम पूरण पदवी पावो ॥ ॥ सुहंकर० ॥ ए आकणी ॥

अर्थ -श्री सागर स्वामी ज्ञान दर्शन वीर्यादि अनत उत्तम गुणोना आगर के० निधान छे, मुनि नु मुनिपणु कायम राखवा मनिओना प्राण जीवन छे अने मुनि लोकोने शुद्धात्म तत्त्वमा विशेषे वि-श्राम आपवावाला छे वली सागर स्वामी सकल परद्रव्यनो कामना रहित छे, ज्ञान दर्शनादि स्वभा विक अनत कार्य सकल समय सहज स्वभावे कर छे अने ते कार्यगुण प्रगटपणे थयो ते ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि अनत कार्यगुण समुदायना समकाले अनत आनद भोगी छो आत्माना प्रति प्रदेशमा निज कार्य करवाना छति पर्यायो अनता, देखवा रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनता, आचरण रमण रूप कार्य करवाना छती पर्याय, अनता, वीर्य, अचल राखवा रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनता तेम ए आदि अनत कार्य करवाना अनत गुणना छती पर्याय प्रति प्रदेशे अनतानता छे ते

छती पर्याय रूप गुण करण प्रयोग विना प्रयासे दर समय अनंत स्वस्वकार्य थयां करे छे ते कार्यनी व्यक्ति अने शक्तिना पण भोगी छो हे भवि जीवो ! एवा सुख करवावाला परम समाधिना दातार जिनेश्वरने सेवो-तेमना गुण गावो जेथी पोतानी सहज पूर्ण परमानंद पदवी पामो ॥ १ ॥

सामान्य स्वभाव स्वपरना, द्रव्यादि चतुष्टय धरना ॥ देखे दरशन रचनाये, निज वीर्य अनंत सहाये ॥ सु० ॥ २ ॥

अर्थः- अस्तित्वादि स्वपर द्रव्यना सामान्य स्वभावने अने द्रव्य क्षेत्र काल भाव एहवा निजात्म स्वभावने निज अनंत वीर्य सहाय वडे दर्शन गुणे करी सकल समय पूरण पदे देखो छो ॥ २ ॥

तेहने ते जाणे नाण, ए धर्म विशेष पहाण ॥ सावय वीकारज शक्ते, अविभागी पर्यय व्यक्ते ॥ सु० ॥ ३ ॥

अर्थः-एमज स्वपर सामान्य विशेष स्वभावने अने स्वपर द्रव्यादिकने विशेष प्रधान ज्ञान गुणे

करीने पूर्ण पर्याये सकल समय जाणो छो एटले निर्मल केवलज्ञान रूप छो प्रति प्रदेशे सर्व कार्य करवाना कारणपणे छती पर्यायो अनतानत रह्या छे ते सावयव के० एक समय प्रवर्त्तीमा आवीर्भावे उपजे अने तीरोभावे विणसे वली बीजा समये आवीर्भावे थएला पर्यायो आवीर्भावथी विणसी तीरोभावे जाय (उपजे) एम दर समये जूदा जूदा कार्य करवाने माटे तेज पर्यायो आवीर्भावे तिरो-भावे उपज्या विणस्या करे तेथी ते पर्यायोने साव-यव पण कहीये अने समय समय जूदा कार्य करे तेने चीकारज शक्ति कहीए पण ते सर्वे छती पर्यो-यो अविभागी छे अने कार्य प्रयोजने एटले उद्धताए सामर्थ्यपणे आवे पण ते सर्व छती प्रजायो सत्ता पणे सदा ध्रुव छे नवे नवे समये ज्ञेयोनी नवी नवी वर्त्तना थाय ते अनतानती वर्त्तनाने जाणे माटे जूदा जूदा कार्यने जाणे ते चीकारज शक्ति कहिये बीजी रीते सावयव के० अविभागी भिन्न भिन्न पर्याय माटे आत्म अगना अवयवो पण कहिये ॥३॥

जे कारण कारज भावे, वरते पर्याय प्र-
भावे ॥ प्रति समये व्यय उत्पादि, ज्ञेयादिक
अनुगत सादि ॥ सु० ॥ ४॥

अर्थः-छती पर्यायो प्रवर्त्ते तेने कारण कहिए
अने कारण होय त अवश्य कार्य करे अने पर्याय
पोताना प्रभावे वर्त्ते तेथी प्रति समय व्यय उत्पाद
एटले कारणपणेथी कार्यपणे उपजे अने कार्य करी
पाछा कारण पणे उपजे तेथी दर समय व्यय उत्पा-
द थया करे अने नवा नवा ज्ञेयने जाणवाथी तेनो
सादि पण कहीए उक्तंच -"परिगमनं पज्जाओ"
एटले पर्याय एक कार्य करी रीते करी बीजा का-
र्यमा जाय, एक कार्यपणे उपजेला त्याथी विणसी
बीजा कार्यपणे उपजे तेमज दर समय पर्याय प्र-
वाह जाणवो ॥ ४ ॥

अविभागी पर्यय जेह, समवायी कार्यना
गेह ॥ जे नित्य त्रिकाली अनंत, तसु ज्ञायक
ज्ञान (भाव) महंत ॥ सु० ॥ ५ ॥

अर्थ -प्रति प्रदेशे अविभागी जे छती पर्याय रह्या छे ते आत्माथी अभेदपणे समवाय संबंधे छे अनादि संबंधे पण कहिए अने ते पर्यायोने सर्व समय कार्य समवाय एटले कार्य संबंध छे एटले ते कार्यना धर्म छे ने अविभागी पर्यायो नित्य छे, त्रिकाली छे, अखंड छे, तेमाथी एक पर्याय पण कोई काले घटे वधे नहीं तेथी अक्षय छे, स्वतंत्र छे अप्रयासे कार्यकारी छे एटले विना प्रयासे पण सहज स्वभाविक कार्य थया करे तेमाना ज्ञानना अनंत पर्यायोमा परम ज्ञायक भाव रह्यो छे ते पर्यायो वडे पोते पोताने अने अन्य द्रव्यना गुण पर्यायोने जाणवानी महत शक्ति रही छे ते शक्ति प्रभुजीने तो व्यक्ति पणे थई तेथी ते ज्ञानादिक अनंत गुणोना ज्ञाता भोक्ता छे ॥ ५ ।

जे नित्य अनित्य स्वभाव, ते देखें दर्शन भाव ॥ सामान्य विशेषनो पिंड, द्रव्यार्थिक वस्तु प्रचंड ॥ मु० ॥ ६ ॥

अर्थ -वस्तुता जे नित्यानित्य स्वभाव तेने प्रभुजी दर्शनभावे करी देखे छे तेथी प्रभु सामान्य

अने विशेष लक्षणना एकत्व पिंडआत्म द्रव्य छे ते द्रव्यपणे सदा छतीवंत छे अने प्रचंड के० महावीर्यवंत (बलवंत) वस्तु छे ॥ ६ ॥

ईम केवल दरशन नाण, सामान्यविशेषनो भाण ॥ द्विगुण आत्म श्रद्धाण, चरणादिक तसु व्यवसाए ॥ सु० ॥ ७ ॥

अर्थः-एम प्रभुजी केवलदर्शन अने केवलज्ञानवंत छो एटले वस्तुना सामान्य विशेष भाव प्रकाश करवावाला सूर्य छो उपयोगमयी आत्मा छे अने ते उपयोग सामान्य विशेष बे प्रकारे छे उक्तंच "उवओगमयो अप्पा, उवओगो दुविअप्पो" एटले आत्मा दर्शन ज्ञानमयी छे अने चरणादिक तसु व्यवसाए के० ज्ञान उपयोग अने दर्शन उपयोगमां थिरताए रमण तेनुज नाम चारित्र कहीए वली ज्ञान दर्शनना अनंत पर्यायमां थिरताए उपयोग रमे तिहां रागादि विभावनो अवकाश नथी माटे परम वीतरागताए शुद्धात्मभावमां थिरता तेनेज चारित्र कहिए अने आदि शब्दे उपयोगमां आत्म अंग अने आत्म गुणपर्याय अबाधितपणे रहे तेने

अव्याबाध गुण कहीए, उपयोगने थिर अडोल अकंप रागवावाली निज शक्तिने अचल अनत वीर्य कहिए, शुद्ध उपयोगमा थिर रहेलो आत्मा परम समाधि भोगवे छ माटे तेन परम समाधि कहिए, कोई प्रकारनो भय आवे नहीं माटे निर्भय कहिए वली कोई प्रकारे व्याकुलता आवे नहीं माटे निराकुल कहिए, उपयोगमा अन्य प्रवृत्ति नथी माटे परम निवृत्ति कहीए, शुद्धोपयोगवतन परतन्त्रता नथी माटे परम स्वतन्त्रता कहीए, शुद्धोपयोगी आत्म गुणमाटे परम तृप्तियत छे माटे परम तप कहीए, थिर उपयोगवत स्वपरद्रव्य भाव प्राणना हाणी करतो नथी तेथी परम क्षमा कहीए वली सर्व जीवोनी सत्ता समान जाणे छे कोईने हीण अधिक जाणतो नथी माटे परममार्दव कहीए, अहींआं स्वपर जीवने वचनु ठगनु नथी थकता नथी माटे परम आर्जव कहीए, अहींआ परद्रव्यनी कामना इच्छा मूर्छा ग्राहकता व्यापकता रक्षकता स्पृहा नथी माटे परम मुक्ति कहिए एम सहज शुद्धात्म अनत गुणो उपयोगमांज भासे छे ए प्रमाणे व्यवसाय के० ज्ञानदर्शन शुद्धोपयोग व्यापारमा

चरणादिक अनंत गुणो आव्या जाणवा ॥ ७ ॥

द्रव्य जेह विशेष परिणामी, ते कहीए पज्जव नामी ॥ छती सामर्थ्य दुभेदे, पर्याय विशेष निवेदे ॥ सु० ॥ ८ ॥

अर्थः–द्रव्य पोते सामान्य छता विशेष परिणामी छे एटले एक द्रव्यमा अनत स्वपर्याय अने अनत स्वपर्यायमा एक द्रव्यपणुं माटे पर्यायनामी कहीए उक्तंच.–" ॥ गुणाणमासऊ दव्वं, एक दव्वसिया गुणा ॥ लख्खण पज्जवाणतु, उभऊ निस्सिह्या भवे " ॥ एटले अनत पर्याय लक्षणवत द्रव्य जाणवो ते पर्यायो छती अने सामर्थ्य एम बे भेदे छे, छती पर्याय क्षेत्र विस्तारपणे सर्व प्रदेशमा अनतानता रह्या छे अने ते वकाले सामर्थ्य पणे उर्द्धताए आवी कार्य करे छे एटले तिर्यक् क्षेत्र विस्तारपणे जे रह्या ते छती पर्याय कहीए अने स्वकाले उर्द्धताए आवी आप आपणुं कार्य करे ते सामर्थ्य पर्याय कहिए एम विशेष पर्यायने निवेदे के, विशेष भोगवे छे ॥ ८ ॥

तसु रमणे भोगनो वृद, अप्रयासी पूर्णा-नद ॥ प्रगटी जस शक्ति अनंती, निज कार-ज वृत्ति स्वतंती ॥ सु० ॥ ६ ॥

अर्थ.–ते अनंत स्वशुद्ध रम्य पर्यायमां रमण तेथी दरेक समय समकाले अनंतानंदनो भोग छे अने ते पर्याय प्रयुंजवामां अने भोग भोगववामां कोई प्रकारे कोई वखत पण प्रयास करवो पडतो नथी पण सहेजे पर्याय प्रवर्त्ते छे अने सहेजे भोग आनंद उपजे छे ज्यो जेने अनंती शक्ति स्वतंत्र प्रगट थई छे तेथी सकल गुणोनी आप आपणा कार्योनी प्रवर्त्ती सहज स्वभावे स्वतंत्रपणे थाय छे ॥ ६ ॥

गुण द्रव्य सामान्य स्वभावी, तीरथपती त्यक्त विभावी ॥ प्रभु आणा भक्ते लीन, तिणे देवचंद्र पद कीन ॥ सु० ॥ १० ॥

अर्थ.–प्रभु, गुणे अने द्रव्ये सामान्य स्वभावी छे, चतुर्विध संघने तारवानो मार्ग स्थापन करवा-वाला तेथी तीर्थपती जेणे सकल विभाव तज्यो

छे एम छता पण उदय प्रभावे भवि जीवोने देशना आपी तारे छे पण तेनु ममत्व करता नथी जे जीव प्रभुजीनी आणा सेववामा लयलीन थयो तेणे देव-मां चद्रमा समान एवु पोतानु सिद्धि पद प्रगट कर्युं करे छे अने करशे । १० ॥

---

॥ अथ चतुर्थ श्री महाजस जिन स्तवन ॥

आत्म प्रदेश रंगथल अनुपम, सम्यक्-दर्शन रंगरे, निज सुखके सधैया ॥ तुं तो निज गुण खेल वसंतरे ॥ निज० ॥ पर परि-णति चिंता तजी निजमें, ज्ञान सखाके संगरे ॥ नि० ॥ १ ॥

अर्थः—आत्माना असख्याता प्रदेशमा रहेली ज्ञानदर्शन चरण वीर्यादि अनत आत्म शक्ति ते अनत आनद आपवावाली छे माटे रग स्थानक तेनेज कहीए के ज्यां अनंत आनद आवे अने जे विषयनो आनद ते तो अथिर परतत्र बहु रोगो

अने कर्मबंधनु कारण छे तेमा विषयरोग वडे अज्ञानीने भोगबुद्धिए आनंद मालुम पडे छे पण आत्म सत्ताभूमिमां रहेलो आत्मीक आनंद तेने एहवा उपचरित आनंदनी उपमा लागी शके नहीं गमे अनुपम निरुपचरीत परम आणंद छे पण ज्यारे जीव मिथ्यात्व बुद्धिए थयेली विपर्यास वासना तजे अने सम्यक्दर्शन प्रगट थाय तोज ते आणंद लई शके तो सम्यक्दर्शन वगर रस आवे माटे सम्यक्दर्शन सहित आत्म सिद्धि सुखना दातार श्री महाजस जिनेश्वर महाजसवंतने आत्म सिद्धि सुखना साधक भव्यजीवो सेवा-ध्यावा छे शास्त्र सुख अभिलापी । जेमा अनंत पर्यायना वास छ एहवा आत्मगुण रुप वसतमा निरंतर रहेलो पुद्गल परिणतिथी काई थाते पण सुख होय नहीं केमके ते अनंत वर्गणार्थी निपजेलो माटे विनाशीक अने आपणा इच्छाए रहे नहीं, आपणी इच्छाए नर्स नहीं एम छता पण मूढ जीव ए माटे भ्रमथी सुख मानी उलटो प्रयास करी फोकट श्रम खेद भोगवे छे एमा अभेद करवाथी नाउभेदपणु थाय, ए माटे सुखनी आशा राखवाथी निराशपणु आवे

माटे पर परिणतिनी आशा तजी शुद्ध दर्शन ज्ञान चरणमय निजात्म परिणतिमां खेलो परपरिणतिनुं चिंतवन ते क्लेश मात्र छे माटे ते तजी ज्ञानमित्र साथे अखड स्वतंत्र शुद्धात्म परिणतिमां खेलो ते थीज एकांतीक अत्यंतीक आनंद उपजे. अहिंआं कांई क्लेश के परतंत्रता छे नहीं ॥ १ ॥

वास बराम सुरुचि केशर घन, छांटो परम प्रमोद रे ॥ नि० आतम रमण गुलाल की लाली, साधक शक्ति विनोद रे ॥ निज ॥ २ ॥

अर्थ –शुद्धात्मम परिणतिमां उपयोगनो वास करवो ते रूप बरासनी शीतल रूपो अने शुद्धात्म गुण समुदायमां रूढी परम रूचि रूप जथाथ केशर परमानंदे निज अंगे छांटो अने रम्य आत्म गुणमां रमण रीक रक्त परिणाम रूप गुलालनी लाली आत्म अंगे चढे तेथी साधक जीवने आपणी अनंत स्वतंत्र शक्तिना विशेष प्रमोद हर्ष उपजे ॥ २ ॥

ध्यान सुधारस पान मगनता, भोजन

सहज स्वभोगरे ॥ निज० ॥ रिंल एकत्वता तान में वाजे, वाजित्र सनमुख योगरे ॥ निज० ॥ ३ ॥

अर्थ –देहिक कार्यप्रवृत्तिथी मन वचन कायाना जोगने निवारी निवृत्ति लेई उपयोगने एक शुद्धात्म ध्येयमा लाववो, थिर अडाल अकंप करवो तेनु नाम ध्यान कहिये ते ध्यान रूप अमृत पानथी मग्न थवु ते परम मग्नता जाणवी अने आत्म गुणाना सहज सुभाग रूप भोजन जाणवु परमानंद स्वगुण परिणतमां रील तथा आत्म गुणना अनन्त पर्यायना एकता रूप अखंड धाराए तान लागवु ते तान कहिए अने मन वचन काय योगनी प्रवर्ती मन्न कार्यथी तूटी सजम कार्य सन्मुख लागी ते याग सन्मुख रूप वाजित्र कहिए ॥ ३ ॥

शुक्लध्यान होरीकी ज्वाला, जाले कर्म कठोररे ॥ निज० शेष प्रकृति दल खिरण निर्जरा, भस्म खेल अति जोररे ॥ निज० ॥ ४ ॥

अर्थ –सकलद्रव्यना द्रव्य गुण पर्याय लक्षण

भिन्न भिन्न विचारी जे जे ना ते तेनामा समाधी पर लक्षणथी परम उदासीन थवुं ते पृथकत्ववितर्क स्वपर विचार नामा शुक्लध्याननो पहेलो पायो अने आपणा अनंत पर्यायो गुणोमा अने द्रव्यमां संक्रमावी अभेद निर्विकल्प उज्वल समयानंतर अखंड ध्यानरुप शुक्लध्यानना एकत्ववितर्क अपर विचार नामा बीजा पायानी ज्वाजल्य ज्योति रुप होलीनी ज्वालामा कर्मरुप कठोर काष्ठ बाली भस्म करी त्यार पछी चौदमा गुणठाणाना अंते शेष चार तेर प्रकृति दल खेरववा रुप निर्झरा ते व्युछिन्न-क्रिया निवृत्तिरुप भस्मखेल अति जोरे करी सकल कर्म पापमल धोई शुद्ध ब्रह्मरुप परम सिद्धि पामे॥ ४

देव महाजस गुण अवलंबन, निर्भय परि-णति व्यक्तिरे । निज० । ज्ञाने ध्याने अति बहुमाने, साधे मुनि निज शक्तिरे । निज० ॥५॥

अर्थ -श्री महाजस देवना पूर्ण निर्मल गुण जाणी तेना अवलंबने अने गुणध्याने अने अति सन्माने भवि जीवो निर्भयपणे आत्मगुणनी आत्म

परिणतिनी पूर्ण प्रगटता पामे मुनिश्रो एम निज शुद्धात्म शक्ति साधे ॥ ५ ॥

सकल अजोग अलेस असगत, नाहि होवे सिद्ध रे ॥ निज० ॥ देवचंड आणामें खेले, उत्तम सुहि प्रसिद्ध रे ॥ निज० ॥

अर्थ –अने मन वचन काया तथा अन्य सव पुद्गल योग रहित तथा लेश्या रहित अन पर संग रहित होय एटले भोगादिकथी नाही थोई सिद्ध थई शिव महेलमा शिववधु सगे आदि अनंत स्व तत्र आनंद भोगवे, देवचंद्र मुनि क हेवे के जे जिने श्वरनी शुद्ध स्याद्वाद आणामा खेलवु तेज उत्तम सिद्धि सुख पामवानु, उत्तम प्रसिद्ध साधन छे ॥६॥



## ॥ अथ पंचम श्री विमलजिन स्तवन ॥

॥ राग–कडखो ॥

धन्य ! तु धन्य तु ! धन्य ! जिनराज तु, धन्य ! तुज शक्ति व्यक्ति सनूरी ॥ कार्य कारण दश सहज उपगारता, शुद्ध कर्तृत्व परिणाम पूरी ॥ धन्य० ॥ १ ॥

अर्थः–हे ! श्री विमलनाथ स्वामी तु धन्य ! के मोहादिक सकल कर्म शत्रुने जीती आत्म सत्ताभूमि पोताने तावे करी अखंड राज्य भोगवो छो. वली ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादिक ताहरूं धन छे, वली धन्य ! तमने के हमारा सरखा रंक जीवोने सहज आत्म शुद्धतारूप धन दर्शावी धनवंत करो छो ० आदि अनेक प्रकारे तमने धन्य ! छे धन्य ! तमारी शक्ति के जे महा तेजवंत व्यक्त (प्रगट) थई छे ज्ञानादिक सकल गुणकार्यरूप कार्यदशा तथा ते कार्यना कारण रूप कर्त्ता पर्यायनी प्रवृत्ती एम साथे कारण दशा ए बन्ने तमारी समाराम्रा अभेदपणे छे वली हमारा पण आत्म सिद्धि कार्य-

ना परम कारण तमेज छो वली प्रभुजी कारण विना सहज स्वभावे भवि जीवोने उपकार कर छे. ज्ञानादि अनेक कार्यनी कर्तृता पूर्ण पर्याये अने पूर्ण परिणामे करो छो एटले परपरिणामिकता टाली शुद्ध सद्भाव परिणामे आत्मीक अनन्त कार्य करो छो ॥ १ ॥

आत्म प्रभाव प्रतिभास कारज दशा, ज्ञान अविभागि परजय प्रवृत्ते। एम गुण सर्व निज कार्य साधे प्रगट, क्षेय दश्यादि कारण निमित्ते ॥ धन्य० । २ ।

अर्थः-हे प्रभुजी ! तमने पोतानाज प्रभावथी स्वसिद्धि रूप कार्य सिद्ध करवु भास्यु तेथी ज्ञानादिकना छती अविभागि पर्यायो कार्य सन्मुख प्रवर्त्या एटले समस्त गुणोना छती अविभागी पर्यायो आप आपणा कार्य सन्मुख प्रवर्त्या तेथी प्रगटपणे कार्य सिद्ध थयु अने क्षेयनु जाणवु तथा देखवु ते निमित्त कारण मात्र छे पण उपादान पणे तो पोताना छती पर्यायो सकल स्वस्वकार्यमां प्रवर्त्तवाथी कार्य सिद्धि थाय छे एम हमारा पण छती पर्यायो पर प्रवृत्तीमा

जोडायेला छे त्याथी तोडी हमारा ज्ञानादि आत्म कार्य सन्मुख प्रवर्त्तावीशुं तो हमारू पण कार्य सिद्ध थशे एमां कई शंका नथी ॥ २ ॥

दास बहु मान भासन रमण एकता, प्रभु गुणालंबनी शुद्ध थाये । बंधना हेतु रागादि तुज गुण रसी, तेह साधक अवस्था उपाये । धन्य तु० । ३

अर्थ —ताहरी आज्ञा सेववावाला ताहरा दासने ताहरा गुणोनो परम आदर बहु सन्मान आववाथी ताहरा गुणो यथार्थ भासे अने रमण पण तमारा शुद्ध गुणोमां थाय अने साधकना परिणाम विषयादिक पुद्गल गुणोमा जोडायला ते त्याथी छुटी ताहरा शुद्ध गुणोमा एकत्वपणे रमे ते साधक प्रभु गुण आलंबनी थई पोताना ज्ञानादिक गुणो राग रहित करी शुद्ध थाय अने कर्मबंधना हेतु रागादि तथा मन इंद्रियो आदि पर गुण रसी हता ते प्रभु गुण रसी थई पोतानी शुद्ध सिद्धिनी साधक दशा उपजावे एटले बंध हेतुता टली मोक्ष हेतु थाय॥३॥

कम जजाल युंजनकरण योग जे, स्वामी भक्ति रम्या थिर समाधि दान तप शीळ व्रत नाथ आणा विना, थईय बाधक करे भव उपाधि ॥ धन्य० ॥ ४ ॥

अर्थः-पंच इंद्रियो अने मनवचन कायाना योग परद्रव्यमा रक्त थई कर्म जंजाल निपजावे छे, ज्यां सुधी प्रभुनी आज्ञा जाणी आदरी नथी त्यांसुधी आत्मा कर्मचेतनापणे अने कर्मफलचेतनापणे परिणम्या थको पुद्गल क्रियाथी सुख थाय एटले पुद्गल त्याग ग्रहण प्रवर्तिथी सुख थाय छे एम जाणी त्रणे योगो अने पंचे इंद्रिय पुद्गल क्रियामां प्रयुंजे ते थकी आठे कर्मनी जाल सुधी पोतेज तेमा फसायो बधायो रहे पण ज्यारे प्रभुनी आज्ञा जाणे सन्मानें आदरे त्यारे ते पचेंद्रियो अने त्रणे योग थिर समाधिमा रमे अने प्रभुनी आज्ञा वहारनु दान शीळ तप व्रतादि भावधर्म विना एकांते इहलोक आहारादि अर्थे, परलोक स्वर्गादि अर्थे, अपयश न टाळवा अने मान मेलववा अर्थे जेजे अनुष्टानो आदरे ते ते कर्मबंधना कारण थई भव उपाधिने वधारनार थाय ॥४॥

सकल परदेश समकाळ सवि कार्यता, करण सहकार कर्तृत्व भावो ॥ द्रव्य परदेश पर्याय आगमपणे, अचल असहाय अक्रिय दावो ॥ धन्य० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभुने सर्वे समय समकाले सर्वे कार्यनी कारणताना करण रुपे छती अविभागी पर्याय अनता छे ते छतीपर्यायरुप करणनी प्रवर्त्ति रुप कारणनी सहाये सर्वे कार्य समकाले थया करे छे पण द्रव्यना प्रदेशरूप पर्याय आगममां कह्या प्रमाणे अचल असहाय अने अक्रियपणे छे एटले प्रदेश काई कार्य करता नथी पण प्रदेशने आधारे छती अविभागी पर्यायो रह्या तेज कार्य करवाना कारणपणे प्रवर्त्ते छे ॥ ५ ॥

उत्पति नाश ध्रुव रूवदा सर्वनी, षट्गुणी हानीवृद्धि अनूनो ॥ अस्ति नास्तित्व सत्ता अनादि थको, परिणामन भावथी नहीं अजूनो ॥ धन्य० ॥ ६ ॥

अर्थ–ते छती पर्यायो सर्वे सर्वदा कार्यपणे उपजे अने कारण पणेथी विणसे वली कार्यपणेथी विणसी कारणपणे उपजे वली आवीर्भावपणे उपजे अने तीरोभावपणेथी विणसे वली तीरो भावपणे उपजे अने आवीर्भावपणेथी विणसे वली षट्गुणी वृद्धि हाणी पणे उपजे विणसे तेनो विगत –

छती पर्यायमाथी जे प्रदेशे सामर्थ्यभावे अनंत पर्यायो आव्या छे तथो अन्य प्रदेशे तेज समये अनंतगुणा पर्याय सामर्थ्यपणे आवे वली तेथी अन्य प्रदेशे तेज समये असंख्यातगुणा पर्यायो सामर्थ्यपणे आवे–उपजे वली तेज समये तेथी अन्य प्रदेशे संख्यातगुणा पर्याय सामर्थ्यपणे उपजे वली तेज समये अन्य प्रदेशे अनंतमे भागे पर्याय सामर्थ्यपणे उपजे वली तेज समये अन्य प्रदेशे असंख्यातमे भागे पर्यायो सामर्थ्यपणे उपजे वली तेज समय अन्य प्रदेशे संख्यातमे भागे पर्यायो सामर्थ्यपणे उपजे एज प्रमाणे छए भेदे सामर्थ्य पणेथी विणसे अने तीराभावे उपजे एम षट्गुणी हाणी अने वृद्धिनो उत्पाद अने व्यय एक समय

समकाले थाय ज्यां हाणीनो व्यय त्यां वृद्धिनो उत्पाद अने ज्यां वृद्धिनो व्यय त्यां हाणीनो उत्पाद एम प्रदेशो आश्रित तिर्जकताए हाणी वृद्धि समजवी. हवे समय आश्रित उर्द्धताए षट्गुण हाणी-वृद्धि कहीए छीए तेनी विगतः–

प्रथम समय ज प्रदेशे अनंता पर्यांनो सामर्थ्य-पणे उत्पाद हतो अने तीरोपणानो व्यय हतो तेज प्रदेशे अन्य समये तेथी अनंतगुणा पर्यायनो साम-र्थ्यपणानो उत्पाद अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी असंख्यातगुणा पर्या-यनो सार्थ्यपणे उत्पाद अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी सख्यात गुणा पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी अनतमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी असं-ख्यातमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्र देशे तेथी सख्यातमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद अने तीरोपणे व्यय थाय एम समय आश्रित पण

षट्गुण हाणीवृद्धि जाणवी ते उद्देशाए हाणीवृद्धि कहीए एम सिद्धांतमा विविध प्रकारे हाणीवृद्धि कही छे ते सिद्धांतोथी समजी लेजो ग्रंथ गौरव माटे अहिंआ विशेष लख्युं नथी अहिंआ षट्गुण हाणीवृद्धि कही ते समासथी समजवी पण अनंताना अनंत, असंख्याताना असंख्यात अने संख्याताना संख्यात भेद छे ते सर्वे मलीने अनंत गुण हाणिवृद्धि समजवी

ए षट्गुण हाणीवृद्धि रूप परिणमन कर्युं तेम सर्व समय अस्ति अस्तिरूप परिणामे, नास्ति नास्तिरूप परिणामे, ज्ञानपर्याय ज्ञानपणे, दर्शनपर्याय दर्शनपणे, वर्णपर्याय वर्णपणे, गंधपणे ए आदि जे जे द्रव्यमा जे जे सामान्य विशेष स्वभाव होय ते ते सर्व समय ते ते रूपेज परिणामे एम परिणमन धर्म अनादिथी सर्व द्रव्यमा छे काइ नवो तथो नथी अने जूनो मटतो नथी पण नवि नवि स्वगुण परिणतिए परिणमे, यत भगवई अंगे—"अत्थि ते अत्थित्त परिणमयी नत्थि ते नत्थित्त परिणमयी" एटले कोई द्रव्य स्वस्वरूप अगर

स्वस्वभाव छोडे नहीं अने अन्य स्वभावने ग्रहे नहीं पण मिथ्यात्वी बहिरात्मा जीवनी द्रष्टी आत्मस्वभाव बाहिर वर्त्ते छे तेथी पोताना शुद्ध परिणमन तरफ द्रष्टी विना ते शुद्ध भावने जाणी आदरी शकतो नथी एटलेज पुद्गल परिणतिमां पोतानु कार्य मानी ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि गुणोने पुद्गल परिणतिमां रोके छे तेथी स्वगुणो अवरायी चल अने मलीन थई शुद्ध स्वगुण कार्य करी शकता नथी तेथी शुद्ध स्वतंत्र परमाणंदनो भोग केम लेई शकाय ! अर्थात् नज लेई शकाय माटे विमल जिनेश्वरनां विमल वचनो हृदयमां धारी परम सन्माने प्रभु आलंबने वर्त्ते ते सकल दुःखथी निवृत्ति परमाणंद प्राप्त करे. वली सर्व द्रव्यने षट्गुण हाणी वृद्धिमां कोई समय पण न्यूनपणु के अधिकापणु थतु नथी द्रव्यमा अगुरुलघु एक अखंड चक्र छे ते सर्व सम परिणमे-फरे प्रदेश गते हाणी वृद्धि कहेवाय पण द्रव्य स्वभावे तो गुरु लघु थतो नथी तेथी अगुरुलघु नामे ए गुण जाणवो. पचास्ति द्रव्यने स्वद्रव्ये स्वक्षेत्रे स्वकाले अने स्वभावे अस्ति पणु छे अने परद्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभाव

रुप थवानो सत्ता स्वद्रव्यादिकमा नथी एटले पर द्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभाव रुप न थवा दे वानो सत्ता द्रव्यमा छे तेनेज नास्तिस्वभाव कही ए. एम सदा स्वद्रव्यादिके रहेवु ते अस्तित्वभाव अने परद्रव्यादिके थवानो स्वभाव पोतामा नहीं ते नास्तिस्वभाव कहीए ते नास्तित्वस्वभाव पण द्रव्यमा छतो छे अस्तित्वस्वभाव सर्व समय स्व द्रव्यादिकने छतीपणे राखे अने नास्तिस्वभाव ते परद्रव्यादिकपणे न थवा दे ए बने स्वभाव द्रव्यना द्रव्यथी अभेदपणे जाणवा एम नित्य स्वभाव, अनित्यस्वभाव, भेदस्भाव, अभेदस्वभाव, भव्यस्व भाव, अभव्यस्वभाव एम द्रव्यना सामान्य विशे-षादि अनेक स्वभाव द्रव्यमा द्रव्यथी अभेदपणे छे तेमांथी मुख्यपणे कोई कोई ठेकाणे थोड़ा अधिका मुख्य स्वभाव दर्शाव्या छे पण द्रव्य अनंत स्व भावी छे ते सर्व स्वभावना परिणमन भाव नहि

अनादिना छे पण नवो परिणमन भावी नथी सर्व समय आप आपणी परिणामिक कोई द्रव्य के कोई गुणो के कोई पर्यायो चूके कोईनी परिणामिकता कोईथी रोकाय नहीं

माटे शुद्धात्म परिणामिकता अखंड जाणी निर्भय निराकुलपणे स्व छती पर्यायना अनंत स्वतंत्र आनंदमा मग्न रहेवु. ज्यासुधी आत्म शुद्धतानु ज्ञान नथी त्यासुधी जीव विभावतामा रमी दुःखी रहे छे पण शुद्धात्म ज्ञान थया आदर्या पछी विभावतानो अंश रहे नहीं तो दुःख शाने होय ? माटे आत्मा पूर्ण स्वगुण पर्यायने जाणी परमानंद भोगी थाय माटे अवसर पामी प्रमाद छोडी शुद्ध सदागम सेवी परमानंद भोगी थवु एज उपदेश छे ॥६॥

ईणी परे विमल जिनराजनी विमलता, ध्यान मन मंदिर जेह ध्यावे ॥ ध्यान पृथक्त्व सविकल्पता रंगथी, ध्यान एकत्व अविकल्प आवे ॥ ७ ॥

अर्थः–ए प्रमाणे विमल जिनेश्वरनी पूर्ण विमलता ऊलखी मन मंदिरमां विमलतानु ध्यान ध्याय ते प्रत्येक द्रव्यना भिन्न भिन्न गुण पर्यायोना भिन्न भिन्न विचार रूप पृथक्त्ववितर्क नामा सविकल्प ध्यान रंगे करी करे तेज पुरुष स्वगुण पर्याय

स्वद्रव्यथी अभेदपणे जाणे अने तेनेज एकत्वपणे विकल्प रहित शुद्ध शुक्लध्यान आवे पण जिन आज्ञाथी जे विमुख छे ते सूत्रना अभिप्राय जाण्या विना ध्येय केवो अने ध्यान विधि केवी तेन ते शुजाणे ? अर्थात् नज जाणे माटे सद्गुरु सगे रहि शुद्ध ध्येय अने शुद्ध ध्यान विधि जाणी शुक्ल ध्यान माटे उद्यम परिणामी थवु एटलेज घनघाती कर्मनो नाश करी शकाय ॥७॥

उक्तंच "जो जाणइ अरिहंते, दव्व गुण पज्जवतेहि ॥ सो जाणइ अप्पाण, मोहो खलु जाहि तस्स लय" वीतरागी असगी अनगी प्रभु, नाण अप्रयास अविनाश धारी ॥ देवचद्र शुद्ध सत्ता रसी सेवता, सपदा आत्म शोभा वधारी ॥ धन्य० ॥ ८ ॥

अर्थः-प्रभुने राग सर्वांशे नाश थयो छे अने पर द्रव्यादिकनो संग नथी तथा औदारिकादि पुद्गलीक विनाशीक अग पण नथी तेथी ज्ञान दर्शन चरण अने वीर्यादि अनत गुणो परम निर्मल अने

थिर थया छे अने अग रहित तथा पर संग रहित थया माटे ते गुणो मलिन थवाने निमित्त पण नथी अने जेना ज्ञानादि गुणो, विनाप्रयासे सहज स्व-तत्रपणे सकल समय पूर्ण पर्याये प्रगटपणे वर्त्ते छे अने पोतानु आत्म अग अने आत्मिक सिद्धि अनन्त-कालसुधी अक्षय अविनाशीपणे प्रगट सिद्धना पाम्या छे एहवा चार निकायना देवोमा चद्रमा समान शुद्ध सत्ता रसी प्रभुजीने शुद्ध सत्ता रसीआे थई सेवे ते स्वभाविक आत्मीक सपदा वारी थाय ॥ ८ ॥

सपूर्ण ॥

## ॥ अथ षष्टम श्री सर्वानुभूति जिन स्तवन ॥

॥ जगजीवन जगवालहो ॥ ए देशी ॥

जग तारक प्रभु वीनवु, विनतडी अव-धाररे ॥ तुज दरशन विण हु भम्यो, काळ अनत अपाररे ॥ जग० ॥ १ ॥

अर्थ.-शुद्धात्म अनंत गुण पर्यायनो सकल समय जेने अनुभव विलास छे, एवा सर्वानुभूति नामा छट्ठा तीर्थंकर जग जीवोना तारक अमारा

आगल हु अरज करू छु ते माहरी अरज अवधारा तमारा सरखा उपकारीनी आणा अणजाणना तमारा दर्शावेला जीवादिक नव पदार्थना भाव मने दह्यां नहीं त्यांसुधी देहादिकनी ममताए ज्ञाना वरणादिक आठ कर्म बांधी भव वनमा भूलो भम्यो अनादि अनंत अपार काल आज सुधी मैं बहु दुःख सह्या ॥ १ ॥

सुहम निगोद भवे वस्यो, पुद्गल परि अट्ट अनंत रे ॥ अव्यवहारपणे भम्यो, क्षुल्लक भव अत्यंत ॥ जग० ॥ २ ॥

अर्थ –सूक्ष्म निगोदमा अनंत पुद्गलपरावर्तन कर्यां अने अनंत कालसुधी व्यवहार राशीमा पण आव्यो नहीं वळ्वळ पुरुपना एक श्वासोश्वासमां अढार वखत जन्म्यो अने सत्तर वखत मरण करयुं एम क्षुल्लक भव घात रहित कर्या वली कषाय अने मारणांतिक समुद्घातनी वेदना वारंवार सही विश्राम न पाम्यो ॥ २ ॥

व्यवहारे पण तिरिय गते, ईग वण खड

असन्नी रे ॥ असख्य परावर्त्तन थयां, भमियो जीव अधन्नरे ॥ जग० ॥ ३ ॥

अर्थः—व्यवहार राशीमा आव्या पछी पण तिर्यंच गतिमा एकेंद्रिय वनस्पति अने असंज्ञीपणामा असख्याता पुद्गलपरावर्त्तन करया एम मारा ज्ञान दर्शनादि निज धन विना अधन्न एहवो हु नीच पणामा भम्यो ॥ ३ ॥

सूक्ष्म थावर चारमें, कालह चक्र असख्य रे ॥ जन्म मरण बहुलां करथां, पुद्गल भोगनी कांखरे ॥ जग० ॥ ४ ॥

अर्थः—वली पृथ्वी, अप, तेउ अने वायु ए चार सूक्ष्म स्थावरमा असख्याता कालचक्रसुधी उपज्यो मरयो, एम पुदगल भोगनी आकाक्षाए तथा आहारादि चार सज्ञा वशे अथाग जन्म मरण करयाँ ॥ ४ ॥

ओघे बादर भावमें, बादर तरु पण ईमरे ॥ पुद्गल अढी लागट वस्यो, नाम निगोदे ईमरे ॥ जग० ॥ ५ ॥

शुद्ध स्वजाति तत्त्वने, बहुमाने तल्लीनरे ॥ ते विजाती रसता तजी, स्वस्वरूप रस पीनरे ॥ जग० ॥ ११ ॥

अर्थ:-जे पुरुष शुद्ध स्वजाती तत्त्व ए० आत्म जाती थी उपन्या जे शुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्र सुख वीर्यादिक सार तत्त्व तेनो रसीओ थई तत्त्वबहुमाने तत्त्वमा लीन थयो ते विजाती के० पुद्गलथी उपन्या वर्ण गंध रस स्पर्श आकार शब्द उद्योग कान्ती छाया प्रभा लोही मास वीर्य त्वचा रत्न मणि माणेक सुवर्ण रूपु देव देवी नर नारी तिर्यंच सन्तान कुटुम्ब औदारिकशक्ति वैक्रियशक्ति आहारकशक्ति तैजसशक्ति कार्मणशक्ति ए आदि जे जे पुद्गलोथी उपजे छे ते सर्व पुद्गल जाती एटले आत्माने ए विजाती छे ते सकल विजातीना रस आस्वादने तजे ते पोताना ज्ञान वीर्यादि शुद्ध स्वस्वरूप रसे पुष्ट थाय एटले सकल कर्म अरि नाश करवानी उत्कृष्ट शक्ति पामे अने ज्ञानादि स्वगुणोमा अचल वीर्य रूप परम स्थिरता पामे ॥ ११ ॥

श्री सर्वानुभूति जिनेश्वररू, तारक लायक

आधार ए व्यक्ति ॥ जि० ॥ से० ॥ ७ ॥

अर्थः-हुं तीर्थंकरोनाज वचनथी जाणुं छुं के एकांतता रुप भावरोग नाश करवा माटे वैद्य ते तो जिनेश्वर छे अने जिनेश्वरनी आज्ञाए वर्त्तवा रूप जिनभक्ति तेज भावरोग नाश करवानो उत्तम ईलाज छे माटे देवचद्र मुनि कहे छे के माहरे तो अरिहंत देवनोज आधार छे के एमना वचन आश्रित हु मारा भावरोगने दूर करी आत्मसिद्धि वरू ए प्रगट छे ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टम श्रीदत्तप्रभु स्तवन ॥

॥ राग धमाल ॥

जिन सेवनतें पाईये हो, शुद्धातम मकरंद ॥ ए आंकणी ॥ तत्त्व प्रतित वसत ऋतु प्रगटी, गई सिसिर कुप्रतीत ॥ ललना दुरमति रजनी लघु भई हो, सद्बोध दिवस वदीत ॥ ललना ॥ जिन० ॥ १ ॥

अर्थः-जिनेश्वरनी आज्ञा सेववाथी आत्म शुद्धता ... पामीए. जेम भमरो म-

एटले ससारसमुद्रनो सहजे पार पाम्या, जेम ध पाढमुनि नाटकणीने घेर रह्या अने नाटक करता छता पण एकत्व अनित्यभावनाए शुद्धात्मतत्त्व विचार करता एटले अल्प प्रयासे केवलज्ञान पाम्या एम भरतादिक अनेक जीवो अल्प प्रयासे केवल ज्ञान पामी सिद्धि वरया छे अने माहरा सरखाने केटलाक बधा कारण मल्या अने प्रयास कर छे तो पण तरता नथी तेनु शुकारण ? ॥ ५ ॥

कारण जोगे साधे तत्त्वने, नवि समरथो ऊपादान ॥ जि० ॥ श्री जिनराज प्रकाशो मुज प्रते, तेहनो कोण निदान ॥ जि० ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थ.–केटलाक मात्र एकांत कारण जोगप्रवृत्ति ए तत्त्व साधवा इच्छे छे पण उपादान संभालता सुधारता नथी जेम कोई घट करवानो अर्थी दंड-वडे चक्र फेरव्या करे एवी कारण प्रवृत्तिनी अनेक क्रिया क्रोडाक्रोडी वरससुधी कर्या करे पण घटनु उपादान जे मृतिका ते माहे पिंड थास कोस प्र

तुम ग्रीवादि घटपर्यायना यथायोग्य जेवा घाट छे तेवा मृतिका पिंडमां काढे नहीं अने मात्र बाह्य कारणप्रवृत्ति क्रोडाक्रोडी थी पण अधिककालसुधी कर्या करे तोपण ते घट नियमा थवानो नथी तेम कोई जीव आत्मसिद्धि अर्थे फक्त कारणप्रवृत्तिनी क्रिया अनंतकालसुधी करे अने उत्सर्ग आत्मप्रदेशमां सम्यक्, विरता, अप्रमादता, अकषायता, थिरता आदि जे जे पर्यायो सिद्धमां छे ते ते पर्यायोनु आत्मप्रदेशमां उपादान करे नहीं तो कोई काले पण आत्मसिद्धि थाय नहीं पण सिद्ध भगवतमां शुद्ध द्रव्यपर्याय अने शुद्ध गुणपर्यायादिनुं जेनु स्वरूप छे तेनु स्वरूप आत्मप्रदेशमां उपादान करे एटले आत्मा आत्म परिणाम करे आत्म संपदा दान आत्मान एटले पाते पाताना कार्य मोक्ष सिद्धि रूप कार्य थाय. ते तो प्रभु आपना उपादानने प्रसंग तानो भावरोग सत्तामां रहीने ते ते कार्यसिद्धि केम करी शके ? तो हे जिनराज अने थनायो छे एकातता रूप भावरोगनु सर्व निदान शु छे ?

भाव रोगना वैद्य जिनवर, भावौषध तुज भक्ति ॥ जि० देवचंद्र ने आरिहंत छे

आधार ए व्यक्ति ॥ जि० ॥ से० ॥ ७ ॥

अर्थ –हु तीर्थंकरोनाज वचनथी जाणु छु के एकातता रुप भावरोग नाश करवा माटे वैद्य ते तो जिनेश्वर छे अने जिनेश्वरनी आज्ञाए वर्त्तवा रूप जिनभक्ति तेज भावरोग नाश करवानो उत्तम ईलाज छे माटे देवचद्र मुनि कहे छे के माहरे तो अरिहत देवनोज आधार छे के एमना वचन आश्रित हु मारा भावरोगने दूर करी आत्मसिद्धि वस्तु ए प्रगट छे ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टम श्रीदत्तप्रभु स्तवन ॥

॥ राग धमाल ॥

जिन सेवनतैं पाईये हो, शुद्धातम मकरद ॥ ए आकणी ॥ तत्त्व प्रतित वसत ऋतु प्रगटी, गई सिसिर कुप्रतीत ॥ ललना दुरमति रजनी लघु भई हो, सद्बोध दिवस वदीत ॥ ललना ॥ जिन० ॥ १ ॥

सादिरे ॥ जग० ॥ १४ ॥

अर्थः-जे कार्यनुजे कारण होय ते कारण मळेज मे कार्य थाय ए अनादिनो नि शक रीत छे माहरा आत्म सिद्धिना निमित्त कारण आजथी प्रभुजी तमेज छो ॥ १४ ॥

अविसंवादन हेतुनी, द्रढ सेवा अभ्यासरे॥ देवचंद्र पद निपजे, पूर्णानंद विलासरे ॥ जग० ॥ १५ ॥

अर्थ.-भव्यने ससारथी तारनार प्रभुजी अवि सवाद हेतु छे जे भव्य तेमनी द्रढ सेवा क० आज्ञा द्रढ परिणामे सेववानो अभ्यास राखे ते देवमा चद्रमा समान पूर्णानंद पदवीनो विलास पामे ॥१५॥



## ॥ अथ श्री सप्तम श्रीधरजिन स्तवन ॥

॥ रसीयानी देशी ॥

से मुख मुख प्रभुने न मली शक्यो, तो
सी वात कहाय ॥ जिणंदजी ॥ निज पर
वीतक वात लहो सहु, पण मने किम पतित
आय ॥ जिणंदजी ॥ से मुख० ॥ १ ॥

अर्थ –श्रीवत श्रीधरस्वामीने हु पोते मुखे मुख
मली शक्यो नही तो शी वात कहिये ? जो मुखे
मुख हु मल्यो होत तो मनमान्या प्रश्नो करी फेंसला
मोहनीनो उतावलो नाश करतो. पोताने अने अ-
नंत अन्य जीवोने वीती वीते छे अने वीतशे ते
सर्वे तमे जाणो छो तोपण मने केम पतित थाय के
प्रभुजीओ माहरी अरज स्वीकारी ? ॥ १ ॥

भव्य अभव्य परित्त अनंत नो, कृष्ण
शुकलपक्ष धार ॥ जि० ॥ आराधक विराधक
रीतनो, पूछि करत निरधार ॥ जि० ॥ से
मुख० ॥ २ ॥

अर्थ–भव्यजीवो अने अभव्यजीवो ए बने अनंता अनता छे तेमा हुं भव्य छुके अभव्य छु ? वली कृष्णपक्षी अने शुक्लपक्षी जीवो तेपण अनता छे एटले जे चरमपुद्गलपरावर्त्तने वर्त्ते छे ते शुक्लपक्षी जाणवा अने जे अचरपुद्गलपरावर्त्तने वर्त्ते छे ते कृष्णपक्षी कहीए तेमा हु शुक्ल पक्षी छु के कृष्णपक्षी छु ? वली जे जिनेश्वरनी आज्ञामां वर्त्ते छे ते मोक्षमार्गना तथा आत्मशुद्धताना आराधक छे अने जे तीर्थंकरोनी आज्ञा बाहिर वर्त्ते छे ते प्रभुआणाना, मोक्षमार्गना अने आत्मशुद्धताना विराधक छे तेमां हु आराधक छु के विराधक छु ? ए आदि प्रश्नो पूछी निरधार करत ॥ २ ॥

किण काले कारण केहवे मले, थासे मुजने हो सिद्धि ॥ जि० ॥ आतम तत्त्व रुची निज रिद्धिनी, लहिशु सर्व समृद्धि ॥ जि० ॥ से मुख० ॥ ३ ॥

अर्थः–माहरे कए काले अने कोण कारण मल वायी सिद्धि थशे ? वली क्यारे हुं आत्मतत्त्व

घरचा खेल ॥ ल० बाधक भावकी नदना हो,
बुध मुख गारिको मेल ॥ ल० ॥ जि० ॥ २ ॥

अर्थः-शुद्धात्म साध्य साधवानी रुचीरुप तथा खांति मृदुता रुजुता निस्पृहता आदि आप आपणी रुडी सखीओ मली तथा सम सवेग निर्वेद आस्ता अनुकंपादि अनेक मित्रो मल्या अने ते सर्वे शुद्धात्म-गुण घर्षारुप खेल खेलवा लाग्या अने होली उपर जेम लोको उघाडी गालो बोले छे तेम बुद्ध पुरुषो बाधक भावनी निंदारुप उघाडी गालो बोलवा लाग्या ॥ २ ॥

प्रभु गुण गान सुछंदशु हो, वाजित्र अति-
शय तान ॥ ल० शुद्ध तत्त्व बहुमानता हो,
खेतल प्रभु गुण ध्यान ॥ ल० ॥ जि० ॥ ३ ॥

अर्थ -तीर्थंकरोना ज्ञानादिकव्यक्तगुणो निर्भय सुछंदपणे गावा लाग्या अने अपायापगमन अति-शय, वचनातिशय, ज्ञानातिशय अने पूजातिशय-रुप वाजित्रमां अद्‌भुत तान लाग्यु शुद्धतत्त्वना

बहुमानपणे प्रभुगुण ध्यानमां एटले शुद्ध सिद्ध गुण ध्यानमां खेलवा लाग्या एटले अन्य ध्येयमां जतुं चित्त वाली शुद्ध ध्येयमां थिरताये रमण करयुं ॥ ३ ॥

गुण बहुमान गुलालसो हो, लाल भए भवि जीव ॥ ल० रंग प्रशस्तकी धूममें हो, विभाव विडारे अतीव ॥ ल० ॥ जिन० ।४।

अर्थः—केवलज्ञानी ओना गुणबहुमानरूप गुलालनी लाली सम्यक्दर्शनी ओना अंगे थही एटले प्रशस्त रागनी धूम मची तेथी अतिशय विभाव छेदवा लाग्या एटले ज्ञान दर्शन चरणादि गुणोनी उज्वलता अने थिरता थयवा मांडी ॥ ४ ॥

जिन गुण खेलमें खेलते हो, प्रगट्यो निज गुण खेल ल० । आतम घर आतम रमे हो, समता सुमति के मेल ल० । जि० ।५।

अर्थ.—एम भव्यने निज गुण रूपाल खेलना शुद्धात्मगुण खेल प्रगट थयो त्यारे आत्मा पुद्गल परिणतिरूप परघर छांडी स्वरूपा भूमिरूप निज

घरमा शुद्धात्म परिणतिरुप सुमती साथे सुमतावंत आत्मानो मेलाप थयो ॥ ५ ॥

तत्त्व प्रतीत प्याले भरे हो, जिन वाणी रसपान ॥ ल० निर्मल भक्ति लाली जगी हो, रिझे एकत्वता तान ॥ ल० ॥ जिन० ॥ ६ ॥

अर्थः-त्यारे पूर्ण तत्त्व प्रतीतरुप प्यालामा जिनवाणीरुप अमृतरस पान भरयु अने सुमता समिति आदि सर्व परिवारे पीधु एटले जिनेश्वरनी आज्ञा सेववा परम वीर्यरुप लाली आत्मअगे प्रगट थई पछी शुद्धात्म स्वरूपमा अखड रीझरुप एकतानु तान लाग्यु ॥ ६ ॥

भव वैराग अबीरशु हो, चरण रमण सुमहत ॥ ल० ॥ समिति गुपति वनिता रमे हो, खेले हो शुद्ध वसंत ॥ल०॥ जि० ॥७॥

अर्थ -वली भवभोग वैरागता रुप अबीर उडाव्यु एटले आत्मा सुमतिसगे परम रूडा स्वभावा चरणमा लाग्यो ते वेला विनयवती पच समिति अने त्रण गुप्ति पोताना स्वामी स्वभावाचरणी

आत्मापासे खेलवा–रमवा लागी. एम स्वहृदमां एटले आत्म स्वप्रदेश हृदमां शुद्ध वसंत रयाल खेले ॥ ७ ॥

चाचर गुण रसीया लिये हो, निज साधक परिणाम ॥ ल० कर्म प्रकृति अरति गई हो, उलसित अमृत उद्दाम ॥ ल० ॥ जि० ॥८॥

अर्थः–ते देखी भवि जीवरूप चाचर शुद्धात्म गुण रसी थई आत्म सिद्धि साधवाना परिणामी थया एटले मिथ्यात्वादिक हेतु प्रवृत्तिए निपजाव्यां जे ज्ञानावरणादिक कर्म तेथी अज्ञान मिथ्यात्व कषाय आदिकनी अरति थई हती ते गई अने ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि निज शुद्ध गुण रूप अमृत प्रगट थयु–उद्धृताए आव्यु एटले उलस्युं उल्लास थयु विभाव सबधे बधायेलु आत्मवीर्य मिथ्यात्वादि कथी छूटी उद्धेता० आव्यु बधथी छूटी उपर आव्युं तेनु नाम उद्दाम कहिए ॥

थिर उपयोग साधन मुखे हो, पिचकारी भार ॥ ल० ॥ उपशम रस भरी छांटता हो

अर्थ –प्रशस्त राग पडे पर जीवोने जिन आज्ञामां रुची उपजाववो ते निमित्त कारणनो एक भेद छे दशमा गुणठाणे सज्वलननो राग रहे त्यांसुधी प्रवचननो भक्तिए प्रेर्यो जीव पर जीवने जिन शासनमां लाववानो परिणामी होय छे ते परिणाम पण निमित्तनो एक भेद छे अने पछी सकल विकल्पो छोडी ज्ञान दर्शन चरणमय एक अभेद आत्म भावमा थीरता पामे छे एज प्रमाणे साधक जीवोना ज्ञान दर्शन चरणादि गुणो आत्माथी अभेदपणे थया छे एटले निर्विकल्प शुद्ध समाधि पाम्या छे ॥ ११ ॥

इम श्रीदत्त प्रभु गुणे हो, फाग रमें मतिवत ॥ ल० ॥ पर परिणति रज धोयके हो, निरमल सिद्धि वसत ॥ ल० ॥ जि० ॥ १२ ॥

अर्थ –एम मतिवत पुरुषो श्रीदत्त स्वामीना शुद्ध गुणोमां चित्त रमाववा रूप फाग रमे तेथी अनादिनो परपरिणतिरूप जे मेल लाग्यो छे ते शुद्ध स्वरूप रमण रूप सवर नीरमा झीलता कर्म रज रूप मेल धोई निर्मल सिद्ध थई शिवपुरीमा वसे ॥१२॥

पुरुष कुटुंबादि विषयो दातारने मित्र जाणवा अने सम्यक्ज्ञान दर्शन चरणात्म वीर्यना दातारने शत्रु प्राय जाणवा, विषय रोगना उपचारने सुख जाणवु अने शुद्धात्म संयममांहे दुःख जाणवु, कारणने कार्य जाणवु अने कार्यने कारण जाणवु, अपवादने उत्सर्ग तथा उत्सर्गने अपवाद जाणवो, पुण्य पाप रूप शुभाशुभ परिणामने धर्मरूप शुद्ध परिणाम जाणवो तथा शुद्ध भावधर्मने पुण्य पापरूप शुभाशुभ परिणाम जाणवो, उनमार्गने मार्ग अने शुद्धमार्गने उन्मार्ग, आश्रवने संवर अने संवरने आश्रव बंधने अबंध अने अबंधने बंध, अकर्त्ताने कर्त्ता अने कर्त्ताने अकर्त्ता, अकारणने कारण अने कारणने अकारण, अकार्यने कार्य अने कार्यने अकार्य, अकारकने कारक तथा कारकने अकारक, अप्रमाणने प्रमाण तथा प्रमाणने अप्रमाण, कुनयने सुनय अने सुनयने कुनय, कुवचनने सुवचन अने सुवचनने कुवचन, समभावीने विषमभावी तथा वक्रभावीने समभावी, उलटभावने सुलटभाव तथा सुलट भाव ए आदि विपर्यास वासनाना असंख्यात अध्यवसाय ( अभिप्राय ) छे ते सर्व जडमूलथी

अर्थ –नवमा श्री दामोदर स्वामीना शुद्ध स्याद्वादामृत रस भरेल्या वचन सांभली आत्म अनात्म आदि अनंत तत्त्वोनो रूडो प्रतित करी उपयोग थिर करी दामोदर स्वामीने परमआदरे वंदीये एटले तेमना वचन अने गुणो अति सन्माने आदरिये जीवने अनादिथी विप्रयास वासना रूप मिथ्या भ्रांति छे तेनी विगत –

जीवमा अजीव बुद्धि, अजीव गुणपर्यायमा जीव बुद्धि, शुद्धात्म स्वभावधर्ममा अधर्मबुद्धि, अने पुद्गल मिया प्रवृत्तिरूप अधर्ममा धर्म बुद्धि शुद्ध तत्त्वना जाण समभावी गुरु उपर कुगुरु बुद्धि अने जैन तत्त्वना अजाण उत्सूत्र भाषी स्वछंदनाए चालवावाला जैन भेखधारी अथवा अन्य भेखधारी उपर सुगुरु बुद्धि, केवलज्ञान केवलदर्शन परम थिरता अचल अनंत वीर्यवंत देव ऊपर अदेव बुद्धि मिथ्याज्ञान मिथ्यादर्शन चपलतावंत सक्रियोये हीण ऊपर देव बुद्धि, अष्टकर्मथी मुक्त थयेलाने अमुक्त जाणवा अने अष्टकर्म बंधन युक्त रागद्वेषवतने अथवा स्नेहपासमा बंधायेलाने मुक्त जाणवा ए पचेने विपरीत अथवा सरखा जाणवा तथा स्त्री

पुरूष कुटुंबादि विषयो दातारने मित्र जाणवा अने सम्यग्ज्ञान दर्शन चरणात्म वीर्यना दातारने शत्रु प्राय जाणवा, विषय रोगना उपचारने सुख जाणवु अने शुद्धात्म संयममांहे दुःख जाणवु, कारणने कार्य जाणवु अने कार्यने कारण जाणवु, अपवादने उत्सर्ग तथा उत्सर्गने अपवाद जाणवो, पुण्य पाप रूप शुभाशुभ परिणामने धर्मरूप शुद्ध परिणाम जाणवो तथा शुद्ध भावधर्मने पुण्य पापरूप शुभाशुभ परिणाम जाणवो, उन्मार्गने मार्ग अने शुद्धमार्गने उन्मार्ग, आश्रवने संवर अने संवरने आश्रव बंधने अबंध अने अबंधने बंध, अकर्त्ताने कर्त्ता अने कर्त्ताने अकर्त्ता, अकारणने कारण अने कारणने अकारण, अकार्यने कार्य अने कार्यने अकार्य, अकारकने कारक तथा कारकने अकारक, अप्रमाणने प्रमाण तथा प्रमाणने अप्रमाण, कुनयने सुनय अने सुनयने कुनय, कुवचनने सुवचन अने सुवचनने कुवचन, समभाषीने विषमभाषी तथा वक्रभाषीने समभाषी, उलटभावने सुलटभाव तथा सुलटभाव ए आदि विपर्यास वासनाना असंख्यात अध्यवसाय ( अभिप्राय ) छे ते सर्व जडमूलथी

उच्छेदिए मन वचन काया ए त्रणे जोगो सदा अव्रत अने विषय कषायमां प्रवर्त्ते छे एटले ते रातदिन सर्व समय पचविषय, पचअव्रत तथा चारकषायथी निवर्त्तता नथी एवो दुष्ट एटले आत्माने अनंत दुःख आपनारी अविरति परिणति अनादिथी लागेली छे ते दुष्ट परिणति टाली विषयो अव्रतादिकथी निवृत्ति लेइ शुद्धात्मभावमां परमस्थिरता साधीए मूल चार कषाय अने कषायना कारणरूप नव नोकषाय तथी आत्मभ्रम अने आत्मगुणो कषाय छे एटले शोषाय छे ते कषाय मेलथी उपजती कलमलता के० कलुषता कापी ने परमधान निज आत्म द्रव्य क्षेत्र काल भावमां परमशांति अने परमसमाधि अने परमसंतोषरूप समता सेविए एटले परद्रव्यादिकमां अनादिथी आपापणु मानेलु छे ते स्वद्रव्य क्षेत्र काल भावमांज आपापणानी बुद्धि थाय त्यारेज परम स्वतंत्र शुद्ध शांति तुष्टि थाय ॥ १ ॥

जंबूने हो भरत जिनराज के, नवमा अतित चोवीशीये ॥ जस नामे हो प्रगटे गुण

आधार छे अथवा ताहरां प्ररुपेला शुद्ध वचन प्ररुपकनो आधार छे पण ताहरी जे आज्ञाथी उलटा दुर्मतीओना वचन आधारे वर्त्ते छे तेने तो जेमां मिथ्यात अज्ञान अने कषाय रुप खारु पाणी भरयो छे एहवा भवसमुद्रमा प्रत्यक्षपणे डूबता देखीए छीए माहरी आज्ञामा रहेवु एज ताहरु दर्शन. तेथी जे सुख पामीए तेने सांसारिक उपचरित सुखनी उपमा लागी शके नही. प्रभुजी तमे आत्मानी अनंत शक्ति पूर्ण पर्याये स्वस्वरुपपदे धारण करी अने तमे ज्ञानादिक निज आत्म अनंत धर्मना परिणामी थया एटले कारकचक्र जे उलटुं फरतु हतु ते पलटी सुलटयु एटले ज्ञान दर्शन चरणादिक आत्मीक अनंत गुणो सहजस्वतंत्रताए अन्य कारण विना अने प्रयास विना सर्वे समय घमघोकार आप आपणा कार्यमां लाग्या एटले पर परिणामीकतानो अंश मात्र क्यां रहे ? अर्थात् नज रहे ॥ ३ ॥

अविनाशी हो जे आत्मानंद के, पूर्ण अखंड स्वभावनो ॥ निज गुणनो हो जे वर्त्तन धर्म के सहज विलासी दावनो ॥ तस भोगी

मरुधरमें हो जिम सुरतरु लुबके, सागरमें प्रवहण समो ॥ भवभमतां हो भविजन आधार के, प्रभु दरशन सुख अनुपमो ॥ आतमनी हो जे शक्ति अनतके, तेह स्वरुप पदे धरया ॥ परिणामिक हो ज्ञानादिक धर्म क, स्व स्वकार्यपणे वरया ॥ ३ ॥

अर्थ -मारवाड देशमा कल्पतरुनी लुबो के० आम्रवृक्षनां झूमरा मलवा दुर्लभ तेम आ दुषम काल पाचमा आरामा ताहरा अनत ज्ञान अनत न्याय अने परम दयामयी वचन पर्यायोनी लुबा मलवी घणा लोकोने दुर्लभ जाणवी अने हमने प्रभुत्व पुण्य पसाए प्रभुवचननो लाभ थयो ते आश्चर्य जेवु जाणी चित्तमा आनद अने उल्लास पामिए छिए एटले भर समुद्रमा झोला खाताने जेम दृढ प्रवहण आवी मले, तेम हमे पण ससार समुद्रमा डुबकीओ खाताने ताहरा स्याद्वाद वचन रुप दृढ जहाज आवी मल्यु, ते पण परमानदनुज कारण छे भवभ्रमण करता भवि जीवोने ताहरोज

आधार छे अथवा ताहरा प्ररुपेला शुद्ध वचन प्ररुपकनो आधार छे पण ताहरी जे आज्ञाथी उलटा दुर्मतीओना वचन आधार वर्त्ते छे तेने तो जेमां मिथ्यात अज्ञान अने कषाय रुप खारु पाणी भर्यो छे एहवा भवसमुद्रमा प्रत्यक्षपणे डूबता देखीए छीए ताहरी आज्ञामा रहेवु एज ताहरु दर्शन. तेथी जे सुख पामीए तेने सासारिक उपचरित सुख नी उपमा लागी शके नही. प्रभुजी तमे आत्मानी अनत शक्ति पूर्ण पर्याये स्वस्वरुपपदे धारण करी अने तमे ज्ञानादिक निज आत्म अनंत धर्मना परिणामी थया एटले कारकचक्र जे उलटु फरतु हतु ते पलटी सुलटयु एटले ज्ञान दर्शन चरणादिक आत्मीक अनत गुणो सहजस्वतन्त्रताए अन्य कारण विना अने प्रयास विना सर्व समय धमधोकार आप आपणा कार्यमा लाग्या एटले पर परिणामीकतानो अश मात्र क्यां रहे ? अर्थात् नज रहे ॥ ३ ॥

अविनाशी हो जे आत्मानंद के, पूर्ण अखड स्वभावनो ॥ निज गुणनो हो जे वर्त्तन धर्म के सहज विलासी दावनो ॥ तसे भोगी

हो तु जिनवर देव के, त्यागी सर्व विभावनो श्रुतज्ञानी हो न कही शके सर्व के, महिमा तुज प्रभावनो ॥ ४ ॥

अर्थ.–प्रभुजी अविनाशी अत्यतीक स्वतन्त्रीक परम अने पूर्ण अखंड आत्मीक स्वभावे मग्न छो. तमारा सर्व स्वगुणो आप आपणा कार्यमा सकल समय वर्त्ते छे ते सहज स्वभाव विलासनो हर्ष तमारे आव्यो छे ते शुद्ध भावनाज तमे भोगी छो अने सर्व विभावना त्यागी छो आठे कर्मने जीती वरप्रधान ज्ञान दर्शन गुणे देदिप्यमान छो. पूर्ण श्रुतज्ञानी पण तमारा गुणादि प्रभावनो महिमा कहि शके नहीं ॥ ४ ॥

निःकामी हो निष्पाई नाथके, साथ हो जो नित तुम तणो ॥ तुम आणा हो आराधन शुद्धके, साधु हु साधकपणो ॥ वीतराग-थी हो जे राग विशुद्धके, तेहीज भवभय वारणो ॥ जिनचद्रनी हो जे भक्ति एकत्वके देवचंद्र पद कारणो ॥ ५ ॥

अर्थः–प्रभुजीकोईपण पुद्‌गल वस्तुना कामी नथी एटले कषाय तो शानो होय ? अर्थात् नज होय. प्रभुजीनो साथ एटले प्रभुजी प्रमाणे हमे पण परगुण कामना रहित अने कषाय रहित सदा रहिए एहवो सदा हमारे साथ होजो अथवा सिद्धक्षेत्रमा हमारे तमारो नित्य स्थिर साथ होजो. हमने शिव मार्गमा प्रेरनारा माटे अमारा नाथ अने प्रभुजी हमने कही गया के शुद्ध सिद्धमा आवो तेज तमारा वचन सफल थजो ए माटे तमारी शुद्ध आणा आराधी शुद्ध साधकपणो साधी आत्मसिद्धता पामु वीतराग देवथी इहलोकादि इच्छा रहित विशुद्ध राग तेज भवभयथी छोडावनारो छे. एहवा सामान्यजिनोमां चंद्रमा समान तीर्थंकर देवनी भक्तिमा एकत्वपणु तेज देवमां चंद्रमा समान सिद्धिपदनुं कारण जाणवु ॥ ५ ॥

संपूर्ण.

## ॥ अथ दशम श्री सुतेज जिन स्तवन ॥

अति रुडीरे (२) जिनजीनी थिरता अति रुडी ॥ ए आंकणी ॥

सकल प्रदेश अनती, गुण पर्याय शक्ति महती लाल ॥ अ० ॥ तसु रमणे अनुभववंती, पर रमणे जे न रमती लाल ॥ आति० ॥१॥

अर्थ –दशमा श्री सुतेज स्वामीनो शुद्धात्म स्वभावमा स्वतन्त्रताए अकपता निश्चलता निराकुलता रूप परम थिरता अति रूडी साह्यमयी जे सर्वे प्रदेशे सर्वे गुणोना पूर्ण पर्यायनी अनत महत सत्ता परम अचल वीर्यपणे सर्वे समकाले सकल स्वकार्यपणे वर्त्तता छता पण थिरथोभ छे ते ज्ञानादिक स्वगुण अनत पर्यायमा प्रभुजीनु रमण तेथी अनुभववती के० ते सर्वे शक्ति सकल समय अनुभव युक्त छे पण पुद्गलादिक परगुणने अनुभवती भोगवती नथी एटले परगुणमा रमती नथी केमके चेतनामा स्वगुण भोग स्वप्रदेशे अस्तित्वपणे छे अने अन्यक्षेत्र परगुण भोगनो स्वप्रदेशे अभाव तेथी स्वप्रदेशे परगुण भोगनु नास्तित्व छे ॥ १ ॥

उत्पाद व्यये पलटती, ध्रुव शक्ति त्रीपदी सती लाल ॥ अ० उतपादे उतपतमती, पूरव परिणति व्ययपती लाल ॥ अ० ॥ २ ॥

अनेक पर्याय रूप कार्य थवानी सत्ता सुवर्ण द्रव्यमां ध्रुवपणे रहे छे ए प्रमाणे उत्पाद व्यय ध्रुव जाणवो जो एम न होय तो द्रव्यनु द्रव्यपणु रहे नहीं छती पर्यायोनो जनक द्रव्य छे एटले छती पर्यायोने आवीर्भावपणे द्रव्य जन्म आपे छे (उपजावे छे) एटले एक समयनु कार्य करी तेज छती पर्यायोने पोतामा तिरोभावपणे समावे छे (द्रवे छे) एटले पर्यायोने आवीर्भाव अने तिरोभावपणे उपजाववु अने राखवु तेज द्रव्यनु द्रव्यत्वपणु छे तादृशी थिरता नव पर्याये उत्पत्तीयत छे अने पूर्व पर्याये व्ययवत छे एटले परिणतिमां परावर्तन धर्म छे तेथी पूर्व पूर्व परिणति व्यय थई नवा नवा समय नवि नवि परिणतिए परिणम्या करे एमज सर्व समय सत्ता उत्पाद व्यय ध्रुव थया करे एटले कोई समय उत्पादना पण नाश नथी व्ययनो पण नाश नथी अने ध्रुवतानो पण नाश नथी माटे त्रणे प्रकारे पण स्वभाव चलायमान नथी पण थिर छे एटले थिरताज पूर्व परिणति रूपथी पलटी नवि परिणति रूप उपजे छे अने सत्ताए ध्रुवज छे माटे थिरतानो उत्पाद व्यय ध्रुव जाणवो एम तमारूं स्वरूप महा

सादि लाल ॥ अ० ॥ जेहने बहुमाने प्राणी, पामे निज गुण सहनाणी लाल ॥ अ० ॥५॥

अर्थः-संग्रह नयथी सत्ता अनादिथी शुद्ध अने थीर छे पण ज्यारे शुद्ध थीरता प्रगट थई त्यारे ते एवभूतनयथी सादि कहिए. ते थीर शुद्ध सत्तानु बहुमान जे भवि करे ते पोतानी थीर अने शुद्ध सत्तानु अहिठाण ( स्थानक ) पामे एटले प्रभुजीनी शुद्ध सत्ता ध्यातो भवि पोतानी शुद्ध सत्ता स्थानक पामे ॥ ५ ॥

थिरताथी थिरता वाधे, साधक निज प्रभुता साधे ॥ लाल ॥ अ० ॥ प्रभु गुणने रंगे रमता, ते पामे अविचल समता ॥ लाल ॥ अ० ॥६॥

अर्थः-शुद्ध सत्तामां अंतरमुहूर्त्त मात्र उपयोग थीर करिए तो ते सादिअनंत शुद्ध सत्तामा थीरतानु कारण थाय छे जेम घट्टना बीजथी घट्टनी वृद्धि थाय वली अग्नि अंशथी महा अग्नि प्रगट थाय तेम कर्मबीजथी कर्मनी वृद्धि अने राग बीजथी रागनी वृद्धि, ज्ञान अंशथी ज्ञाननी वृद्धि अने दर्शन अंशथी

अर्थः-ताहरी शुद्ध अने थिर सत्ता ते स्वप्रभावेज देदिप्यमान छे एटले दीपती दीपायती छे पण अतिशय योगे एटले कांई पुद्गल अतिशय रूप पर योगे दीपती नथी. वली पर भावना योगे छानी पण रहेती नथी जेम शाकमा घणी जातनो मसालो नाखीए तेमा लूणनी खाराश पर योगे छानी रहेती नथी पण पोतानी व्यक्ति देखाडेज छे तेम प्रभुजीनी थिर सत्ता परयोगे पण छुपी रहेती नथी ते सत्ता शुद्धात्म तत्वमा लयलीन छे शुद्धात्म तत्वथी सदा अभेद छे जूदी पडती नथी चेतनादिक द्रव्यना अनंत लक्षणनी स्थिरता कोई अन्य पुरुष ब्रह्मादिकनी करेली नथी तेम कोई शंकरादिक अन्य पुरुष विनाश करवा समर्थ नथी वली विष्णु आदि अन्य पुरुष तमारी सत्ताने राखी शके तम नथी पण तमारी थिर सत्ताना रक्षक ग्राहक व्यापक अने कर्ता भोक्तादि तमे पोतेज छो एटले कोईनी सत्ताना कोई अन्य द्रव्य ग्राहक व्यापक रक्षक कर्ता भोक्तादि नथी एम सम्यक् प्रकारे सत्तानी स्थिरता जाणवी ॥ ४ ॥

संग्रह नयथी जे अनादि, पण एवंभूते

**नमि नमि नमि नमि वीनवुं, सुगुणा स्वामी जिणद् नाथरे ॥ ज्ञेय सकल जाणग तुमे, प्रभुजी ज्ञान जिणंद् नाथरे ॥ नमि० ॥ १ ॥**

अर्थः-हुं निज शुद्ध गुण विरह आतुरताए मोक्षाभिलाषी थई वारवार श्री सुगुणवान् स्वामी-प्रभु नामा अगीआरमा तीर्थंकरने नाम स्थापना द्रव्य अने भाव एम चारे निक्षेपे तथा द्रव्य क्षेत्र काल अने भाव तथा मन वचन काया अने शुद्ध, उपयोग परिणामे नमस्कार करीने एटले पर द्रव्यमां अहपणानु तथा माहरी बुद्धिनु अभिमान छोडी अरज करू छु के प्रभुजी तमे तो अनंत शुद्धात्म गुण पर्यायना स्वामी छो तेथी परम पुरुष छो अने स्वपर त्रीकालवर्त्ती अनंत ज्ञेयना जाणग पासग छो तेथी ज्ञान दर्शन रूप सूर्य छो ॥ १ ॥

**वर्त्तमान ए जीवनी, एहवी परिणति केम नाथरे ॥ जाणु हेय विभावने, पिण नवि छूटे प्रेम नाथरे ॥ नमि० ॥ २ ॥**

अर्थः-हे नाथ ! वर्त्तमान माहरा सरखा जीवने

दर्शन शुद्धि अने तेमज थिरताए थीरता अश वधारवाथी परम थीरता पामीए. माटे आत्मशक्ति वडे अशुद्धताना अश नाश करवा अने शुद्धताना अशथी पूर्ण शुद्धता वधारी परम शुद्ध थीरता प्रगट करो परम थीरताना अनत परमानद विलासी थवु ए उपदेश छे एमज मोक्षाभिलाषी जीव साधकपणु आदरी पोतानी परम शुद्ध थीरतानी प्रभुता साधे एम जिनेश्वरना परम शुद्ध थीर गुणोमा पोतानी परिणति रमाववावालो अविचल शुद्ध थीर समता पामी परम सिद्धता पामे ॥ ६ ॥

निज तजे जेह सुतेजा, जे सेवे धरि बहु हेजा लाल ॥ अ० ॥ शुद्धालबन जे प्रभु ध्यावे, ते देवचद्र पद पावे लाल ॥ अ० ॥७॥

अर्थ –प्रभुजी पोताने तजे करी परम तेजवन छे एहवा प्रभुने जे बहु हितधारी पूर्ण प्रेम प्रतिते सेवे अने शुद्ध आलबन प्रभुने जे ध्याय ते देवमा चद्रमा समान परमात्म पद पामे ॥ ७ ॥

॥ अथ एकादशम श्री स्वामीप्रभुजिन स्तवन ॥

" रहो रहो रहो रहो वालहा ॥ ए देशी "

नमि नमि नमि नमि वीनवुं, सुगुणा स्वामी जिणद नाथरे ॥ ज्ञेय सकल जाणग तुमे, प्रभुजी ज्ञान जिणद नाथरे ॥ नमि० ॥ १ ॥

अर्थः-हुं निज शुद्ध गुण विरह आतुरताए मोक्षाभिलाषी थई वारवार श्री सुगुणवान् स्वामी-प्रभु नामा अगीआरमा तीर्थंकरने नाम स्थापना द्रव्य अने भाव एम चारे निक्षेपे तथा द्रव्य क्षेत्र काल अने भाव तथा मन वचन काया अने शुद्ध उपयोग परिणामे नमस्कार करीने एटले पर द्रव्यमां अहपणानुं तथा माहरी बुद्धिनुं अभिमान छोडी अरज करूं छुं के प्रभुजी तमे तो अनंत शुद्धात्म गुण पर्यायना स्वामी छो तेथी परम पुरुष छो अने स्वपर त्रीकालवर्त्ती अनंत ज्ञेयना जाणग पारग छो तेथी ज्ञान दर्शन रूप सूर्य छो ॥ १ ॥

वर्त्तमान ए जीवनी, एहवी परिणति केम नाथरे ॥ जाणुं हेय विभावने, पिण नवि छूटे प्रेम नाथरे ॥ नमि० ॥ २ ॥

अर्थः-हे नाथ! वर्त्तमान माहरा आत्मा ने विषे

थी एहवी परिणति केम ? हुं जाणुं छुं के विभाव दशा थपाय, दुःखदाता, भवभ्रमण अने परतन्त्रता धरावनार अने ज्ञान दर्शनादि अन आत्म गुणोनी हाणी करनार माटे हेय-तजवा लायक छे छतां पण ए उपरथी प्रेम केम छूटतो नथी ? ॥ २ ॥

पर परिणति रस रंगता, पर ग्राहकता भाव नाथरे ॥ पर करता पर भोगता, स्यो थयो एह स्वभाव नाथरे ॥ नमि० ॥ ३ ॥

अर्थ :—अथिर परतन्त्र अने जगत् जीवोनी एठ आपणी ईच्छाए वर्त्त पण नहीं, आपणी ईच्छाए रहे पण नहीं वली अनेक प्रकारे चपलता कराव नारी एहवी निंदवा लायक पुद्‌गल परिणतिमां चित्त रंगे छे रस लागे छे वली ते परपरिणतिने ग्रहण करवाना वली ते माटे चित्तने व्यापवानो तथा तेने सग्रह करवानो तथा तेने भोगववानो तथा तेने निपजाववा आदि हमारो भाव केम थयो अने केम थाय छे ? ॥ ३ ॥

विषय कषाय अशुद्धता, न घटे ए

धार नाथरे । तो पण वळु तेहने, किम तारिए संसार नाथरे ॥ नमि० ॥ ४ ॥

अर्थः-वली विषयो अने कषायो आत्म [illegible] आत्म गुणोने अशुद्ध करवावाला ते माटे [illegible] मात्र आदरवा न घटे तो शुं सुख जाणी आदर[illegible] वली क्यारे ए दुःख देता नथी के [illegible] ए आदरवा न घटे ए निरधार छे तो [illegible] सरखा तेने ईच्छे छे तो संसारथी केम [illegible]

मिथ्या अविरति प्रमुखने, [illegible] दोष नाथरे ॥ नंदू गरहूं वली [illegible] पामे संतोष नाथरे ॥ नमि० ॥ ५ ॥

अर्थ -वली अज्ञान मिथ्यात्व [illegible] प्रमाद कषाय अने पुद्गल योग ते [illegible] दाता जाणुं छु तेथी तेने [illegible] समझे विशेषे नंदु छुं [illegible] दाई परिणामो राखी [illegible] माटे छु ए [illegible] भूल छे ? ॥ ५ ॥

अतरंग पर [illegible], टालवे [illegible]

नाथरे ॥ आण आराधन विना, किम गुण सिद्धि थाय ना थरे ॥ नमि० ॥ ६ ॥

अर्थ-ए आदि अनेक प्रकारनुं अनरग पर रमण ते कथा प्रकार टलशे ? अने ए अनरग पर रमण जे न छोडे ने तारी आज्ञा अने मोक्षमार्गनो आराधक न थाय अने आणा आराधन विना ज्ञानादिक शुद्धात्म गुणोनी सिद्धि केम थाय ? ॥ ६ ॥

हवे जिन वचन प्रसंगथी, जाणी साधक नीति नाथरे ॥ शुद्ध साध्य रुचीपणे, करिये साधन रीति नाथरे ॥ न० ॥ ७ ॥

अर्थ-हवे प्रभुवचन प्रसंग थयो तेथी साधकनी नीति के० न्याय जाण्यो तथी शुद्ध साध्य रुचिपणे साधनरीतिए प्रवर्तिए एटले ज्ञान गुणे करीने शुद्ध साध्य जाणीए, दर्शनगुणे करीने शुद्ध साध्य निश्चय करिए-देखीए, चरणगुणे करी शुद्ध साध्य आचरण सेवीए अने वीर्यगुणे करीने शुद्ध साधकतामां बल फोरवीए;प्रीतो, शुद्ध साध्यमां अने शुद्ध साध्य दर्शावनारममा कराए, सकल पर कामना

शुद्ध साध्य सिद्ध करवाना कामी थईए, सुखनी आशा अने विश्वास शुद्ध साध्य सिद्धिमाज राखीए, शुद्ध साध्य सिद्धि विना सुख नथी एम प्रतित करीए, शुद्ध साध्य सिवाय अन्य वस्तुथी प्रेम छोडी शुद्ध साध्यमाज प्रेम राखीए, बुद्धि मन वचन काया ए सर्वे शुद्ध साध्य सिद्ध करवामा राखीए वापरीए एम अंतरंग अनेक परपद रमण छे ते छोडी शुद्ध साध्य माहे रंगे चित्त रमावीए तोज ए अनादि कालना दुष्ट विभाव शत्रु नाश पामे कारणे भरोसे सहज शत्रु पण पाछो हठतो नथी तो अनादि कालनो मोह शत्रु सहजे केम पाछो हठे ? तो विभाव नाश करवामां पूरे पूरु पुरुष पराक्रम फोरवीए पण पोतानु पराक्रम शत्रुओना तावे करिए नहीं अने विभाव नाश करवामाज वापरिए तो कर्म शत्रुथी जय वरिए ॥ ७ ॥

भावन रमण प्रभु गुणे, योग गुणी आधीन नाथरे ॥ राग ते जिन गुण रंगमें, प्रभु दीठा रति पीन नाथरे ॥ नमि० ॥ ८ ॥

अर्थ—परद्रव्यनी भावना छोडी प्रभुना शुद्ध

आतमता पलटावता, प्रगटे संवर रूप नाथरे ॥ स्वस्वरूप रसी करे, पुरणानंद अनूप नाथरे ॥ नमि० ॥ ११ ॥

अर्थ.–पर परिणतिमा आत्मता मानी छे ते भेदज्ञाने स्वपर लक्षण भिन्न जाणी स्वद्रव्यादिकमा आत्मता मानिए स्वद्रव्यादिकमा कारण कारक कार्य जाणवे मानवे आदरवे आश्रव नाश थई संवर रूप प्रगटे जे जीव शुद्ध सिद्ध सम स्वरूप रसीयो थयो ते स्वरूप रसी पूर्ण अनंत अनुपम आनंद प्रगट करे ॥ ११ ॥

विषय कषाय हर टले, अमृत थाये एम नाथरे ॥ जे प्रसिद्ध रूचा हुवे, तो प्रभु सेवा धरी प्रेम नाथरे ॥ नमि० ॥ १२ ॥

अर्थ.–एम विषय कषाय रूप हर के० जेर टली अमृत थाय अथवा विषय कषाय रूप हर के० हर–टेव टली संवर रूप अमृत प्रगट थाय जे प्रसिद्धपणे शुद्ध साध्य सिद्ध करवा रूचिवंत होय ते तीर्थंकरोनी आज्ञा सेववामा प्रेम प्रतीत राखे ॥ १२ ॥

कारण रंगी कार्यने, साधे अवसर पामि नायरे ॥ देवचंद्र जिनराजनी, सेवा शिवसुख धाम नायरे ॥ नमि० ॥ १३ ॥

अर्थः-आत्म सिद्धिनां कारण परमेश्वरना वचनमां जेने रंग लाग्यो ते अवसर पामी अवश्य कार्य सिद्ध करे देवोमां चंद्रमा समान देवाधिदेव स्वामी-प्रभुनी आणानु सेवन ते शिवसुखनु स्थानक छे।१३।

॥ संपूर्ण ॥

## ॥ अथ द्वादशम श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन ॥

॥ नमणी खमणी ने मन गमणी ॥ ए देशी ॥

दिठो दरिशण श्री प्रभुजीनो, साचे रागे मनसुं भीनो जसु रागे निरागी थाये, तेहनी भक्ति कोने न सुहाये ॥ १ ॥

अर्थ-केवलज्ञान दर्शनादि अनंत लक्ष्मीवंत अनंत शुद्ध प्रभुताना धणी मुनिसुव्रत स्वामी नामा बारमा तीर्थंकरनु दर्शन दिठु के० प्रभुए जीवादि नव पदार्थादि अनेक शुद्ध तत्त्वो दर्शाव्या छे ते जेने द्रव्यो रूपथी प्रतीत थइ तेने दर्शन थयु कहीए ए दर्शन जेने थयु तेप्रभु गुणोमा साचा रागे मनथी भीनो जेने रागे वीतराग पद पामीए तेनी भक्ति कोने न गमे? अलघत् तुच्छ पुन्योने तो प्रभु आणा भक्ति गमेज पण प्रभु आज्ञाना फलथी जे अजाण छे ते ता मूढपणामा न मुकाई रह्यां छे यतः "नाणाईसु गुणेसु अरिहंताइसु धम्म रूवेसु ॥ धम्मोवगरण साहम्मी एसु धम्मछ जो य गुण रागो ॥ सो सुपसच्छो रागो धम्म सयोग कारणो गुणदो ॥ पढम कायव्वो सो, पस गुणे लब्भई न सव्व " ॥ १ ॥

वर्त्तनारे लाल, सवि जाणे असहायरे ॥ सा०
॥ प्र० ॥ ३ ॥

अर्थ–ज्ञानना अविभागी छती पर्यायमांथी कोई पर्याय कोई काले पण नाश थाय नहीं अने तेज अविभागी छती पर्यायो छतीपणे रहिने सामर्थ्यपणे आवे ते पण अछतीपणे थता नथी एटले छतीपणानो नाश नथी, मात्र तिरो अने आवीर्भाव थयां जाय ज्ञेयोनी नवे नवे समय नवि नवि वर्त्तना थाय ते अन्य द्रव्यनी सहाय विना अने प्रयासविना जणाय देखाय ॥ ३ ॥

धर्मादिक सहु द्रव्यनेरे लाल, प्राप्त भणी सहकार रे ॥ साहि० ॥ रसनादिक गुण वर्त्तारे लाल, निज क्षेत्रे ते धाररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥४॥

अर्थ–धर्मादिक अजीव द्रव्य प्राप्त थयाने सहाय कारी छे एटले धर्मास्तिकायना जे प्रदेशमां गति परिणामी जीव पुद्गल आवी प्राप्त थाय तेनेज ते गतिसहाय आपे, अधर्मास्तिकायना जे प्रदेश मा स्थिति परिणामी जीव पुद्गल आवी प्राप्त थ य तेनेज ते स्थिर सहाय आपे, आकाशना जे प्रदेश मां

जीव पुद्गल आवी प्राप्त थाय मले तेनेज ते अव-
काशदान आपे पण अन्य प्रदेशो रहाने आपे नही,
वली चार अंश स्निग्ध के रुक्ष व्यक्तिमा जे पुद्गल
परमाणु होय ते तेज क्षेत्रमा तेथी बे अंश न्यून
के अधिक स्निग्ध रुक्ष गुण व्यक्तिवाला अन्य
पुद्गल परमाणु आवी प्राप्त थाय तो तेनी साथे ते
मले पण अन्य आकाश क्षेत्रे रहेला स्निग्ध के रुक्ष
बे अंश न्यून अधिक व्यक्तिवाला पुद्गल परमाणु
अगर खंध साथे मले नहि अने कार्मणादि वर्गणा
जीव प्रयोगे परिणमेली जे आकाश क्षेत्रमा होय ते
ते आकाश प्रदेशमा रहेला अन्य वर्गणा साथे मले
ए प्रमाणे धर्मास्तिकायादि चारे अजीव द्रव्यने अन्य
प्रदेशे रहेलाने चलाववु, थीर राखवु, अवकाश
आपवु, के मलवु थतु नथी, चक्षु तथा मन विना
रसनादिक चार इंद्रियोने व्यंजनावग्रह छे एटले
स्वादवाली वस्तु जीभ प्रदेशने मले अने स्पर्शवाली
वस्तु त्वचाने मले अने गंधना पुद्गल नाशीका
अंदर घ्राणइंद्रियने मले-स्पर्शे अने शब्दने पुद्गल
श्रोतइंद्रियरुप पडदाने मले-स्पर्शे तोज तेना बोध
था . ए पांचे इंद्रियो दूर क्षेत्र विषयी नथी छे पण

रसनादिक चार इंद्रियोने तो ते विषयोना पुद्गल स्वक्षेत्रमां आवी मले तेनेज स्पर्श छे अने चक्षु इंद्रियने तो पुद्गल पदार्थ ऊपर पडेलु सूर्यादिनु उद्योत किरण परावर्त्तन थई चक्षुमां आवे त्यारे बोध थाय छे तेथी तेने व्यंजनावग्रह कह्यो नथी पण उद्योत किरण वस्तु ऊपर पडी परावर्त्तन थई आंखमां आव्या विना तेनो बोध थतो नथी अने प्रभुजीना केवलज्ञानमां तो क्षेत्रे काले दूर निकटना पण रूपी अरूपी सर्व पदार्थनो समकाले बोध थाय छे ॥ ४ ॥

जाणग अभिलाषी नहिरे लाल, नवि प्रतिबिंबे ज्ञेयरे ॥ सा० ॥ कारक शक्ते जाणवुरे लाल, भावअनंत अमेयरे ॥ सा० ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभु परद्रव्यने जाणवाना अभिलाषी नथी अने अन्य ज्ञेयोनु प्रतिबिंब पण पोतानी ज्ञायकतामां पडतु नथी पण जीवमा अनंत गुणोना कारक चक्र आप आपणा कार्यपणे दर समय फरे छे तेमां ज्ञान कारक चक्रमा नवा नवा समयनो

सार मानेलो छे पण माहरी ज्ञायकता माहरा द्रव्य क्षेत्र काल अने भावमां तत्त्व जोयी संतोष अने तृप्ती चाली थाय तो ते समता रस अनुभवे ते तो सुमति जिन स्वामीए सुमति सेववा आदरवानी बतावी तेमा व्यापे तोज बने ॥ ७ ॥

बाधकता पलटाववारे लाल, नाथ भक्ति आधाररे ॥ सा० प्रभु गुण रंगी चेतनारे लाल, एहीज जीवन साररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ८ ॥

अर्थ –हमारी अनादिनी बाधक भावे परिणमेली आत्म परिणतिने पलटावी साधक भावमा लाववा तुम सरखा प्रभुनावतनो आणा सेववी एज हमारे परम पुष्ठ आधार छे ए माटे चेतना प्रभु गुण रंगी करवी एज आ वातनु जीवन अने सार छे ॥ ८ ॥

व्यवहार सात नये करी करे ते कहिए छिये

(१) वीतरागना गुणोनो राग अने वीतरागनी आज्ञा सेववानी रुचि ते नैगम नये भक्ति कहीए।

(२) ज्यारे भव्य जीव छेल्लु यथाप्रवृत्तिकरण करे त्यारे संग्रह नये भक्ति कहीए. ए करणमा सत्तापणे जिन प्ररूपित तत्त्वनो अभिलाषी जीव छे।

(३) जिन वचनमा जे आचार क्रिया अनुष्ठान सेववानु कह्यु ते, विष गरल अने अन्योन्य अनुष्ठान त्यागी मोक्षार्थी जीव भेदज्ञानादि श्रुत वाचना, पृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा,, धर्मकथा तथा विनय वैयावच्चादि आत्म शुद्धताने तद्हेतु क्रिया अने शुक्लध्यान रूप अमृत क्रिया विधिने सेवे ते व्यवहार नये भक्ति कहीए ॥ २ ॥

सुख पामे नहिं अने दुःखी रहे पण जेने शिवगती छे० शिव चाल छे एहवा जिनवर देवनी आज्ञा सेववी ते परम दुर्लभ ने पण पर परिणतिने जे रुडी रीते त्यागे—दूर करे तेने ए सेवा सुलभ छे जे जीव सन्मावल प्रकारे अथवा तो अनेक प्रकारे आ अव तजी स्वरथत थाय ते ज पुरुष जिन आज्ञामा परम लीन थई पुष्टपणे जिन आज्ञा सेवे. अनेक प्रकारे आश्रय कह्यो पण ते परवस्तुना राग रूप एक अशुद्ध उपयोगमांज समाय छे अने द्वेष ते तो राग होय तोज उपजे उक्तच "पर दव्व रउ बझ्झ्अी विरउ मुंचेई अठ कम्मेहिं, एसो जिण उवएसो, समासउ बंध मोख्खस्स" ॥ १ ॥

वीतराग गुण राग भक्ति रुची नैगमे होलाल ॥ भ० ॥ यथाप्रवृत्ति भव्य जीव नय समइ रमे हो लाल० ॥ नय ॥ अमृत क्रिया विधि युक्त वचन आचारथी होलाल ॥ वचन०॥ मोक्षार्थी जिन भक्ति करे व्यवहारथी हो-लाल० ॥ करे० ॥ २ ॥

व्यवहार सात नये करी कर ते कहिए छिये,

(१) वीतरागना गुणोनो राग अने वीतरागनी आज्ञा सेववानी रूचि ते नैगम नये भक्ति कहीए।

(२) ज्यारे भव्य जीव छेल्लु यथाप्रवृत्तिकरण करे त्यारे संग्रह नये भक्ति कहीए. ए करणमा सत्तापणे जिन प्ररूपित तत्त्वनो अभिलाषी जीव छे।

(३) जिन वचनमां जे आचार क्रिया अनुष्ठान सेववानु कह्या ते,विष गरल अने अन्योन्य अनुष्ठान त्यागी मोक्षार्थी जीव भेदज्ञानादि श्रुत वाचना, पृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा,, धर्मकथा तथा वि नय वैयावच्चादि आत्म शुद्धताने तद्हेतु क्रिया अने शुक्लध्यान रूप अमृत क्रिया विधिने सेवे ते,व्यव- हार नये भक्ति कहीए ॥ ५ ॥

गुण प्राग्भावी कार्य तणे कारणपणे हो लाल ॥ तणे० ॥ रत्नत्रयि परिणाम ते ऋजु- सूत्रे भणे हो लाल ॥ ते रुजु० ॥ जे गुण प्रगट थयो निज निज कारज करे हो लाल के ॥ निज० ॥ साधक भावे युक्तत शब्द नये ते धरे हो ला.. ॥ शब्द० ॥ ६ ॥

अर्थः-(४) ज्ञानादि अनंत आत्म गुणो शुद्ध प्रगट करवा रूप कार्यनो परिणामी थयो जीव ते मुख्य शुद्ध ज्ञान दर्शन चरणादिना परिणाम करे ते ऋजुसूत्र नये भक्ति कहीए (५) ज्ञानादिक शुद्धात्म गुण जे जे अंशे प्रगट थई आप आपणु कार्य शुद्ध प्रगटपणे करवा लागे अने सर्व गुणो पूर्ण प्रगट करवानो साधक भाव आदरे ते शब्द नये सेवा भक्ति कहीए ॥ ३ ॥

पोते गुण पर्याय प्रगटपणे कार्यता हो लाल ॥ प्र० ॥ उणे थाये जाव ताव साभिरूढता हो लाल ॥ ताव० ॥ संपूरण निज भाव स्वकारय कीजते हो लाल ॥ स्व० ॥ शुध्दातम निज रूप तणे रस लीजते हो लाल ॥ त० ॥ ४ ॥

अर्थ -(६) केवलज्ञान केवलदर्शन यथाख्यात् चारित्र अने परम अचल वीर्यगुण अने पर्यायो प्रगटपणे आपआपणु कार्य करे छे त्याथीज ज्यासुधी अव्याबाध अक्षयस्थिति अटलअवगाहना अने अगुरुलघु ए चार गुणोना अंश अघाती कर्मे वंशे

ज्यांसुधी पूर्ण प्रगट करया नथी त्यांसुधी समभि-रूढ नये सेवा कहिए (७) शैलेसी करणना छेल्ला समय आवे गुणोना सर्व अंश प्रगट निर्मल करया अने ते मुख्य आठ गुण शिवाय अनंता गुणोना पूर्ण अंश प्रगट थया अने ते सर्व गुणो आपआपणु कार्य पूर्ण पर्याये पूर्ण पदे करवा लाग्या त्यारे एवं भूत नये सेवा थई एटले चौदमा गुणठाणाना चरम समये एवंभूतनये सेवा जाणवी ए स्थान के पूर्ण आत्म शुद्ध पर्यायनो लाभ ले छे त्यां एवंभूतनये सेवा थई जाणवी सेवानु फल सेवा आवे मलेज छे पण कालान्तरना वायदो नथी कोई कहे क-सेवानु फल तो ते भवे अथवा भवान्तरे पण फले छे तेम कहीए छ शुभ उपयोगवडे शुभ कर्मदल बंधाय ते अनुक्रमे उदय आवे पण अहींया तो शुद्धतानी वात छे अने शुद्धतामां आत्मगुण प्रगट थयानो आनंद ते ना तत्काल आवे छे अने ज्या गुणठाणानु कारण थाय छे. जेम सूर्य उग्यो के तेज बखते अंध कार नाठो अने उद्योत थयो तेना आनंद तेज बखत आव्यो तेम अहींआ अशुद्धता नाठी अने शुद्धता प्रगट थई ते अशुद्धतानु दुःख गयु अने शुद्धताना

गुण एकत्वे थाय स्वगुण प्राग्भावता हो लाल
स्वगुण० ॥
देवचंद्र जिनचंद्र सेवा मांहि रहो हो लाल ॥
सेवा० ॥
अव्याबाध अगाध आतम सुख मयहो हो
लाल ॥ आ० ॥ ७ ॥

अर्थ.-तेम प्रभुथी पवित्र राग ते आखर पूर्ण वीतरागता प्रगट करे. प्रभुना निर्मल गुणनुं एकत्व ध्यान करवाथी परिणति आत्म गुणथी एकत्व. एथी पूर्ण गुण प्रगटे एम देवोमा चंद्रमा समान एवा शिवगति साहेबनी सेवामां रही आत्मिक अनंत अव्याबाध अगाध सुखने सादिअनंतकाल सुधी भोगवो-राचो ॥ ७ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ पंचदशम श्री आत्मारोजन स्तवन ॥
॥ मन मोह्य अमारू एहे गुणे ॥ ए देशी ॥

करो साचा रंग जिनेश्वरू, ससार विरग सहू अन्यरे ॥ सुरपति नरपति संपदा, ते तो

दुरंगधी कदन्नरे ॥ करो० ॥ १ ॥

अर्थः–हे ! शाश्वत सुख अभिलाषी भव्यो ! तमो थास्ताग स्वामीना वचने अने आस्ताग स्वामीना गुणोमां साचो रंग करो ससार विरंग छे० ससारना अनेक प्रकारना जे धन विषय सन्मान आयुष्य कुटुंबादि तेमा मिथ्या दशाए रग लागे छे पण ते सर्वे विपरित रग छे अने आत्मक्षेत्रथी न्यारा विनाशीक भय भरेलो परतंत्र पूर्वापर क्लेश युक्त छे देवोना पति इंद्रो अने मनुष्योना पति चक्री राजाउ आदिनी सपदा जे अश्व गज स्त्री आदि ते तो जगत् जीवनी एठ, दुर्गंधीक अने सडेला अनाज जेवी, विव्हलता करावनार, पापकारी, हीनता युक्त छे पण तेमा मोह मदिरानी छाके अबुध थया जीवोने सुख जणाय छे पण परमार्थ ते रोग अने रोगना उपचार छे ॥ १ ॥

जिन आस्ताग गुण रस रमी, चल विषय विकार विरूप रे ॥

विण समकित मते अभिलसे, जिणे चाख्यो

अर्थ –ज्ञानगुणना अविभागी छती पर्याय रूप करणे वधतो वधतो अने नवो नवो ज्ञान गुण निर्मल प्रगट थाय तेम दर्शन चरणादि सर्व गुणोना छती पर्याय रूप करवो दर्शन चरणादिक गुणो पूर्ण पर्याये निर्मल प्रगटे अने सत्तागते ज्ञानावरण दर्शनावरण अने मोहनीय आदिना रस (अनुभाग) अने स्थिति दल सहित छेदे अने प्रदेश उदयथी सक्रमण करी निर्जरा करे अने अज्ञान मिथ्यात्व कषाय तथा जन्म मरण भय शोकादिनो छेद टाले ॥ ६ ॥

सहज स्वरूप प्रकाशथी, थाय पूर्णानंद विलासरे ॥ देवचंद्र जिनराजनी, करज्यो सेवा सुख वासरे ॥ करो० ॥ ७ ॥

अर्थ –सहज शुद्धात्म स्वरूप प्रकाश थवाथी स्वतंत्र आत्यंतिक पूर्णानंद विलास प्रगट थाय माटे देवचंद्र मुनि कहे छे जिनराजनी सेवामा रही शुद्ध आत्म सत्ताभूमिमां स्वतंत्र सुखे वास करज्यो ॥७॥

॥ संपूर्ण ॥

परालंबन तजी शुद्ध साध्य आलंबने छेक वलगी एटले प्रभुनी आणा आलंबनमा पण टकी तेथी निज परिणति निज ज्ञानादिक शुद्ध स्वाभाविक आनंदमा मग्न थई- रमवा लागी रही ॥ २ ॥

त्यागीने सवि पर परिणति रस रीझ जो, जागी छे निज आत्म अनुभव ईष्टतारे लो ॥ सहजे छुटी आश्रव भावनी चालजो, जालम ए प्रगटी संवर शिष्टतारे लो ॥ ज० ॥ ३ ॥

अर्थः-पुद्गल परिणति रस रीझ त्यागीने आत्म गुण अनुभव अभ्यासमां ईष्टपणु जाग्यु तेथी सहजे अनादिनी आश्रव भावनी चाल-टेव हती ते छुटी एवी महा जोरावर संवर भावनो शिष्टता के० उत्तम चाल प्रगट थई ॥ ३ ॥

वधना हेतु जे छे पाप स्थानजो, ते प्रभु भगते पाम्या पुष्ट प्रशस्ततारे लोल ॥ ध्येय गुणे वलग्यो पूरण उपयोग जो, तेहथी पामे ध्याता ध्येय समस्ततारे लोल ॥ ज० ॥ ४ ॥

अर्थः-बंध हेतु जे जे पापना स्थानक हतां ते प्रभु भक्तिए पलटी शुद्धात्म पुष्ट प्रशस्तपणे थयां ते नीचे प्रमाणे-

(१) प्राणातिपातपणे जे परिणाम हतो ते पलटी द्रव्य भाव दया परिणामे परिणम्यो
(२) अनृत वचन परिणाम हतो ते सत्य अमृता परिणामे परिणम्यो
(३) अदत्त ग्रहणपणे परिणाम ते शुद्धात्म तत्त्व ग्राहकपणे परिणम्यो.
(४) पुद्गल द्रव्य गुण पर्याय मथन रूप कुशिल परिणाम ते स्वगुण पर्याय समाधि कामी सहजानंद रमणी थयो
(५) पर ग्रहण रूप परिग्रह परिणाम ते शुद्ध स्वगुण पर्याय ग्राही थयो
(६) क्रोध परिणाम पलटी परम क्षमा रूप थयो
(७) मान परिणाम मृदुता रूप थयो.
(८) माया परिणाम आर्यव रूप थयो.
(९) लोभ परिणाम मुक्ति सतोष रूप थयो
(१०) राग परिणाम वीतरागता रूप थयो.
(११) द्वेष परिणाम अद्वेष रूप थयो

(१२) क्लेश परिणाम अकलुष समाधि रूप थयो
(१३) अभ्याख्यान परिणाम सुभाषित थयो
(१४) पैशुन्य परिणाम मिथ्यात्वादिक दुर्गुणोना छिद्र मर्म जाणवा देखाडवावालो थयो
(१५) परपरिणतिमां रति अरति परिणाम हतो ते विरति निवृत्ति रूप थयो.
(१६) पर जीवना अपवाद बोलवा रूप परिणाम हतो ते विभाव अपवाद बोलवा रूप परिणाम थयो
(१७) माया मृषा परिणाम–ते अमाय सत्य रूप थयो.
(१८) मिथ्यात्व शल्य परिणाम हतो–ते सम्यक्त्व निःशल्य परिणाम थयो.

एम अढारे पाप स्थानक पलटी निस्पाप अबंध स्थानी थयां अशुद्ध उपयोग निर्मल थई अनंत गुण पर्यायमयी सहज शुद्धात्म ध्येयमां पूर्ण अखंडपदे लाग्यो–थिर थयो तेथी ध्याता ध्येयनी पूर्ण समाधि पाम्यो ॥४॥

जे अति दुस्तर जलधि समो संसारजो,
ते गोपद सम कीधो प्रभु अवलंबने रे लोल ॥

जिन आळंबनी निरालंबता पामे जो, तेणे हम रमशुं निज गुण शुध नंदनवनेरे लोल ॥ ज० ॥ ५ ॥

अर्थ-संसार समुद्र तरवो अति दुस्तर हतो ते जेम गायना पगलाथी पृथ्वी उपर पडेला खाड मां भरायेलु पाणी सहजे उलघी जवाय तेम ते भवसमुद्र प्रभु आलबने तरवो अति सुगम थयो एम प्रभुना आलबने जे वर्ते ते निरालंबपणु पामे एटले ते पुरुषने कोई अन्य पुरुष के अन्य वस्तुनु आलंबन लेवानी कदापी जरूर रहे नहीं ते माटे हमे प्रभु अवलंबने निरालंबता पामी निज शुद्ध गुण नदनवनमां आनदे रमीशु ॥ ५ ॥

साध्यादि निज प्रभुताने एकत्वजो, क्षायक भावे थाये निज रत्नत्रयीरे लोल ॥ प्रत्याहारी धारे धारणा शुद्ध जो, तत्त्वानंदी पूर्ण समाधि लय मईरे लोल ॥ ज० ॥ ६ ॥

अर्थ.-शुद्ध साध्य आदि निज प्रभुतामां एकत्व परिणामे रमे एटले शुद्ध साध्य जाणी सिद्धि

पुद्गल आशा रागी अनेरा, तसु पासे कुण खाये फेरा ॥ जसु भगते निर्भय पद लहिए, तेहनी सेवामां थिर रहिये ॥ २ ॥

अर्थः-जे देवपणा विना देव अने गुरुपणा विना गुरु कहेवाय छे अने पुद्गल परिणतिना भीखारी एवा अन्य जीवोनी अने पुद्गल परिणतिनी आशा राखे छे तो ते भीखारी पासे भीख मांगनारा तेनी पासे हमेशा शामाटे ? कयुंसुख ? अने कयो गुण लेवा फेरा खाईए ? जेनी भक्तिए निर्भय निराकुल शुद्ध स्वतन्त्र शिव पद पामाए तेवा वीतरागनी आज्ञा सेवामां थिर रहिए तेमनी आज्ञा अने सेवाथी चलायमान थई पहिरात्म भावमां न जईए ॥ २ ॥

रागी सेवकथी जे राचे, बाह्य भक्ति देखीने माचे ॥ जसु गुण झेले तृष्णा आंचे, तेहनो सुजस चतुर किम वाचे ॥ ३ ॥

अर्थः-रागी छतां देव तथा गुरु कहेवाता एवा देव तथा गुरु पोताना सेवकोनी बाह्य भक्ति देखीने तेउ उपर खुशी थाय छे, माचे छे, मग्न थाय

छे पण ते कहेवाता देव तथा गुरूना ज्ञानादि क्षात्यादि गुण रूप धन ते भोग तृष्णाआवे दाझे छे तेनो जस चतुर पुरुषो केम बोले ? जे पोतेज आत्म धन हीण छे ते बीजा भव्य पुरुषोने आत्म धने धनवंत केम करी शके ? अर्थात् नज करी शक माटे माहरे तो अचिंत्य आत्मीक धननो दातार प्रभु तुज एक छे ॥ ३ ॥

अंतरंग कालिमल सवि कपे ॥ ५ ॥

अर्थः–एहवा देवनी भक्ति भव भयनी कापवावाली छे निश्चयथी प्रभु कोई अन्य द्रव्यने गुण दोष करता नथी पण व्यवहार नयथी शुद्ध नये देशना आपी अनेक भवि जीवोने ससार समुद्रथी पार उतारे छे अने सम्यक्ज्ञान दर्शन चारित्र आपे छे एम अनेक भविने गुण करे छे तेथी गुण करवानी शक्तिए करी गाजे छे एहवा प्रभुनी आज्ञा सेववा रूप दास भाव जे आदरे ते स्वतंत्र आत्म शुद्धता रूप अनत प्रभुता पामे अने अतरंगमा रह्यो जे कलुपता उपजावनार अज्ञान मिथ्यात्व अने कषायादि विभावता रूप मेल तेने कापे ॥ ५ ॥

अध्यातम सुख कारण पूरो, स्वस्वभाव अनुभूति सनूरो । तसु गुण वलगी चेतना कीजे, परम महोदय शुद्ध लहीजे ॥ ६ ॥

अर्थ –श्री मुनिसुव्रत स्वामी आत्म अधिकार राज्य सुख भासिनु पूर्ण पुष्ट कारण छे शुद्ध आत्म स्वरूप अणजाणता जीव पोतानो आत्मीक अधिकार जाणे नहीं तेथी पुद्गल द्रव्य पर्यायने पोते

अने पोताना जाणी मानी तेना अधिकारी पोते थई अधि॰ अने परतत्र पुद्गलनु कर्त्ता भोक्ता ग्राहक व्यापक रक्षकपणु पोतामां मानी बेठा छे. ते पुद्गलो आपणा राख्या रहे नहीं, कर्या थाय नहीं वली पर-वेत्री पदार्थो भोगवी शकाय नहीं वली लेवाय नहीं एम अणहातु थाय नहि तेथी तेमां खेद करी करी तेना विनाशे पोतानो विनाश आदि विपर्यास भावना करी रहि छे तेथी जन्म मरणादिक अनंत दु ख भोगवे छे पण ज्यारे प्रभु वचने आत्मा पोतानो आत्मीक अधिकार जाणे त्यारेज सकल क्लेशथी मुक्त थाय अने आत्मअधिकारनु अत्यंतीक स्वतंत्र सहज सुख पामे तो ते अध्यात्मीक सुखना दातार ना प्रभु अने प्रभु आणाना शुद्ध प्ररक छे ते सिवाय अन्य कोई नथी माटे परम अने पूर्ण उपकारी प्रभुजी तमेज छो जेम कोई पुरुष परघर परवस्तु पर स्त्री आदिकनो अधिकारी नथी अने परघर, स्त्री वस्तु आदिकनो अधिकारी पोताने मानी ते परवस्तुने आदरे तो ते सुखी थाय नहीं अने ▪ खी थाय पण ज्यारे पोतानो घर स्त्री आदि वस्तुनो अधिकारी पोताने जाणे माने आदरे त्यारेज दु ख मटे अने सुख पाय तेम आत्मा अन्य वस्तुनो अधिकारी

नहीं छतां पोताने अन्य वस्तुनो अधिकारी जाणी मानी आदरे तो ते दुःखी रहे, पण सुखी थाय नहीं. ज्यारे पोतानो अधिकार जेवो छे तेहवो जाणी मानी आदरे तोज सकल दुःखी थी निवर्त्ती अने परमानंदनी प्राप्ति थाय अने प्रभुजी तो निज ज्ञानादि रिद्धिना अनुभव भोगमा सदा तृप्त-मग्न छो महा तेजवंत छो आपणी चेतना प्रभुना ज्ञानादिक निर्मल गुणे वलगी राखीए एटले ज्ञानचेतना प्रगट थाय. चेतना अनादिथी कर्मफलचेतनापणे अने कर्मचेतनापणे परिणमेली वलगेली छे. ज्यासुधी चेतना कर्मफलचेतनापणे एटले उदय आवला शुभाशुभ कर्म फलमा राग द्वेषपणे परिणमे छे तथा योग क्रिया प्रवर्त्तीथीज सुख उपजे छे एम जाणी क्रिया परिणाममा कर्मचेतना पणे वर्त्ते छे त्यासुधी स्वरूप ज्ञानमां लागती वलगती नथी पण ज्यारे प्रभुना परम निर्मल ज्ञानादि गुणे वलगे त्यारे शुद्धात्म स्वभावमां आनंद जाणी शुद्धात्म स्वभावमां थिर रहेवा ज्ञानचेतनापणे परिणमे माटे आपणी चेतना प्रभु गुणे रसीली करीए एटलेज शुद्ध स्वगुण रसी थाय. एम परम महोदय ** केवलज्ञानादि अनंत स्वगुण नि-

थेल पूर्ण व्यक्ति पामीए ॥ ६ ॥

मुनिसुव्रत प्रभु प्रभुता लीना, आतम संपत्ति भासन पीना ॥ आणा रंगे चित्त धरीजे, देवचंद्र पद शीघ्र वरीजे ॥ ७ ॥

अर्थः-जे जीव मुनिसुव्रत स्वामीनी पूर्ण प्रभुता जाणी आश्चर्य पाम्या के अहो ! प्रभुजीनु परमज्ञान परमदर्शन परम थिरताए शुद्ध स्वपर्याय रम्यमाई रमe अने परम अचल स्वतंत्र अबाधित वीर्य• एम अनंत गुणोनी शुद्धतानो परमानन्द जाणी चित्त लीन थयु तेनेज निजात्म शुद्ध संपदानु पुष्ट भासन थयुं ए माटे तीर्थंकरोनी आज्ञामा रंगे चित्त थिर करीए तोज देवचंद्र मुनि कहे छे के शुद्धात्मपद उतावलु पामीए ॥ ७ ॥ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ त्रयोदशम श्री सुमतिजिन स्तवन ॥

॥ कान्हैयालाल ए देशी ॥

प्रभुस्यू इस्यू विनवुं रे लाल, मुज विभाव दु:ख रीतिरं साहिबियालाल । तीन कालना ज्ञेयनीरे लाल, जाणो छो सहुनीतिरे साह

होय तेम थाय अने उद्यम, पण भवितव्य प्रमाणे थने अने जे जे काले जे जे योग संभव छे ते तेम पने एम पण समवाय मल्या कार्य थाय एमां कांई थंका नथी, एमाथी कोई पण एकांतना ते मिथ्यात्व छे ज्ञेय ज्ञान साथे मली एकमेक थाय नहीं, ज्ञान ज्ञेय क्षेत्रे जाय नहीं अने ज्ञेयपण ज्ञान क्षेत्रे आवे नहीं जेम दर्पणमा जे पदार्थो भासे छे ते पदार्थो दर्पण साथे एकमेक थई जता नथी, दर्पण दर्पण रुपे अने पदार्थ पदार्थ रुपे रहे छे तेम ज्ञान ज्ञान रुपे अने ज्ञेय ज्ञेय रुपे रहे छे ए मर्यादा छे, प्रभुजी तमे दूर आकाश क्षेत्रे रह्या अप्राप्तमेय ज्ञेयने अने एक आकाश क्षेत्रे रह्या स्वपर प्राप्तमेय ज्ञेयने तथा वर्तमान काले वर्तनना प्राप्त अप्राप्तमेय ज्ञेयने अने अतित अनागते वर्तता अप्राप्तमेय ज्ञेयने क्षेत्रथी अने कालथी दूर अने निकट एटले अप्राप्त अने प्राप्तमेय ज्ञयने जे जेम छे ते तेम, समकाले अशेष पणे जाणो छो एटले कोई पण ज्ञेय एहवो नथी के तमारी ज्ञायकतामा न भासे ॥ २ ॥

छति परजाय जे ज्ञाननारे लाल, ते तो नवि पलटायरे ॥ सा० ॥ ज्ञेयनी नवनव

करवामा शुद्ध साधनाए निज प्रभुता के० निज शक्तिमां एकत्त्वपणे थिर उपयोगे प्रवर्त्ते तेने पोताना केवलज्ञान केवलदर्शन अने केवल चरणरमण क्षायकभावे थाय परभावथी परिणाम पाछो वाली एटले प्रत्याहार करी शुद्ध ध्येयमा धैर्यपणे धारणा राखे, वीर्य अचल राखी अडोल रहे तो तत्त्वानंदी जीव पूर्ण समाधिमा लयलीन थाय एटले विकल्पे व्यापेलो उपयोग शुद्ध अचल निज रूपमा लय पामी परम अचल समाधिमय रहे ॥ ६ ॥

अव्याबाध स्वगुणनी पूरण रीत जो, कर्त्ता भोक्ता भावे रमणपणे धरेरे लोल ॥ सहज अकृत्रिम निर्मल ज्ञानानंदजो, देवचंद्र एकत्वे सेवनथी वरेरे लोल ॥ जं० ॥ ७ ॥

अर्थ.-अनंता गुणो अव्याबाधपणे राखवानी एज पूर्ण रीत छे के स्वगुण कर्त्ता भोक्तापणामां पोताना परिणामनु रमण अखंड समय एकत्त्वपणे धारे—राखे एटले देवमा चंद्रमा समान नमिश्वर स्वामीनी सेवामा परिणाम एकत्त्वपणे राखवाथीज सहज स्वभाविक निर्मल अनुपचरित ज्ञानानंद पामीए ॥ ७ ॥

॥ समाप्त ॥

## ॥ अथ सप्तदशम श्री अनीलजिन स्तवन ॥

॥ देखो गति दैवनीरे ॥ ए देशी ॥

स्वारथ विणु उपगारत रे, अदभुत अ
तिशय रिद्धि ॥ आत्म स्वरूप प्रकाशता रे,
पूरण सहज समृद्धि ॥ अनील जिन सेवीएरे
नाथ तुमारी जोडि न को त्रिहु लोकमेरे,
प्रभुजी परम आधार अछो भवि थोकनेरे ॥१॥

अर्थ –हे अनीलनाथ स्वामी ! सत्तरमा तीर्थ
पति तमे पोतानो स्वार्थ तो सिद्ध करयो छे हवे
हमाराथी तमार कांई पण स्वार्थ नथी ते छतां पण
तमे तमारा सरखा भव्य जीवों उपर परोपकार करो छो
वली अदुभूत अतिशयवंत छो एटले तमारा अपा
यापगमन अतिशय वडे तमारा पाप दुरित दु'ख
नाश थाय छे वली तमारा वचनातिशय थडे हमे
हमारी भाषामा तमारा वचन सहजे समजीए
छिये वली तमारा परम ज्ञानातिशय पसाये-हमोने
अनात्मथी भिन्न शुद्धात्म स्वरूपनु ज्ञान थाय छे
वली तमारा पूजातिशय पसाये हमे हमारा पूज्य

परमपदने पामीए एवो तमारी अतिशयादिक तथा अष्ट महा प्रातिहार्यादि तथा अंतरंग केवलज्ञान दर्शनादिकनो भाव लक्ष्मी छे वली तमे शुद्धात्म स्वरूपना प्रकाश करवावाला पूर्ण सहज समृद्धि- वंत छो माटे हमे अमोल प्रभु तमोने सेवीए तमे हमोने संसार दुःखथी छोडाववावाला हमारा नाथ छो त्रिलोकमा त्रण काले तमारी जोडीनो कोई अन्य हेतु के॰ उपगारी नथी तेथी प्रभुजी तमे थोक बंध भवि जीवोने परम आधार छो ॥ १ ॥

परकारज करता नहिरे, सेव्या पार न हेत
जे सेवे तनमय थईरे, ते लहे शिव संकेत आ, ।२।

अर्थ.- प्रभुजी तमे पर जीव तथा पर पुद्गल कार्यना कर्त्ता नथी अने तमने सेवनार भविने निश्चयथी तमे पालवावाला के राखवावाला के पार पमाडवावाला नथी पण तमने जे तन्मय थई सेवे छे तेने तमे जाणे समस्या बंध सलाहवंध शिव आपो एम जणाय छे पण तेनी सेवानु तेज पुरुष शिवसुख फल पामे छे एमा काई शका नथी ॥२॥

करता निज गुण वृत्तितारे, गुण परिणति

उपभोग ॥ निप्रयास गुण वर्त्ततारे, नित्य सकल उपयोग ॥ अनील० ॥ ३ ॥

अर्थ -प्रभुजी तमे तो सकल समय विना प्र यासे निज गुण प्रवृत्तिना कर्त्ता छो अने तमारे स्व गुण परिणतिनोज सकल समय उपभोग छे, नि.प्र यासे सहजे गुण वर्त्त छे अने तेनो उपयोग पण तमारे सकल समय अखड छे ॥ ३ ॥

सेव भक्ति भोगी नहींरे, न करे परनी सहाय ॥ तुज गुण रंगी भक्तनारे, सहजे का-रज थाय ॥ अनील० ॥ ४ ॥

अर्थ -तमारि आज्ञा सेववावाला तमारी सेवा भक्ति कर तेना तम भोगी नथी अने तमे परनी सहाय करवावाला पण नथी पण ताहरा ज्ञानादिक गुणोमा रंगी थई तमारी आज्ञा सेवे ते भक्तोना सहजे कार्य थाय ॥ ४ ॥

किरिया कारण कार्यतारे, एक समय स्वाधीन ॥ वर्त्ते प्रति गुण सर्वदारे, तसु अनु-भव लयलीन ॥ अनील० ॥ ५ ॥

अर्थ.-तमारे अनेक गुणोना कार्यनी क्रिया कारण अने कार्यपणु प्रति गुणोनुं दरेक समयमां सम काले तमारे पोताने स्वाधीन छे ते अनुभव रस स्वाद ॥ तमे लयलीन छो ॥ ५ ॥

ज्ञायक लोकालोकनारे, अनील प्रभु जिनराय ॥ नित्यानद मयी सदारे, देवचंद्र सुखदाय ॥ अनील० ॥ ६ ॥

अर्थः-देवचद्र मुनि कहे छे के अनील प्रभु, अगीआरमा बारमा अने तेरमा गुणठाणाना सामान्य जिनोमा राजा अने लोक अलोकना सकल रूपी अरूपी द्रव्य गुण पर्यायना उत्पाद् व्यय ध्रुव त्रिकाल प्रवर्त्तीना ज्ञाता-द्रष्टा नित्य अखड पूर्ण स्वतत्र अनत आनदमयी तथा सकल जीवोने सुखना दातार छो ॥ ६ ॥ ॥ समाप्त ॥

---

॥ अथ अष्टादशम श्री जशोधर जिनराजनुं स्तवन ॥

॥ राग मारू ॥ ए देशी ॥

वदन पर वारिहो जशोधर वदन पर वा-

रिहो ॥ मोह रहित मोहन जयाको उपशम रस क्यारि हो ॥ अहो उपशम रस क्यारिहो ॥ वा० ॥ १ ॥

अर्थ—हे जशोधर स्वामी ! शरद पूनमना चन्द्रमा समान तमारा वदन कमलनी बलिहारी जाउं—वारी जाउं माहन जया मातने आनंद आपनारा मोहन जीतेला भवि जीवोना हृदय कम लमां उपशम रस सींचवावाला पोते उपशमरस्-ना क्यारा छो ॥ १ ॥

मोह जीव लोहको कंचन, करवे पारस भारि हो ॥ समकित सुरतरू उपवन सिंचन, वर पुष्कर जलधारि हो ॥ अहो० ॥ वा० ।२।

अर्थ—माहरा सरखा मोही जीव लोह सरखाने कंचन करवा माटे तमे परम पारस छो एटले अज्ञान मिथ्यात्व क्लेश रूप कीट मटावी आत्म शुद्धता रूप सुवर्ण करवावाला छो, समकित रूप कल्पवृक्षनी बागने सींचवा प्रधान पुष्कलावर्त्त मेघ-नी धारा समान छो एटले तमारा वदन ०

शुद्ध तत्त्वामृत अखंड धाराए वरसे छे ॥ २ ॥

सर्व प्रदेश प्रगट मम गुणथी, प्रवृत्ति अनंत अपहारी हो ॥ परम गुणी सेवनतें सेवक, अप्रशस्तता वारी हो ॥ अहो० ॥ व० ॥३॥

अर्थ —प्रभुजीने सकल प्रदेशो अनंता गुणो शुद्ध अने अनंत पर्यायो पूर्ण प्रगट थया तेथी विभाव प्रवृत्ति अनंती नाश करी एहवा परम गुणीनी आज्ञा सेववावाला सेवके सकल अप्रशस्तता निवारी छे एटले प्रभुनी सेवा करनार भवि जीवनी आत्म विरुद्धता अनंती टली ॥ ३ ॥

पर परिणति रूची रमण ग्रहणता, दोष अनादि निवारीहे। । देवचंद्र प्रभु सेवने ध्याने आतम शक्ति तसारी हो ॥ अहो० ॥ व० ॥४॥

अर्थ.—ए प्रभुनी सेवाथी पुद्गल परिणतिनी रुचि रमण अने ग्रहणतानो टेव रुप अनादिनो दोष निवारी निज शुद्ध परिणतिनी रुचि रमण अने ग्रहण करयु देवचंद्र मुनि कहे छे जे जीवे प्रभु आणा सेववामा अखंड ध्यान राख्युं तेणे पोतानी

शुद्धात्म परम शक्ति सभाली लीधी ॥ ४ ॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ एकोनविंशतिम कृतार्थ जिन स्तवन ॥

॥ अधिका ताहरो हु अपराधि ॥ ए देशी ॥

सेवा सारज्यो जिनजी मन साचे, पण मत मागो भाई ॥ महेनतनो फल मांगी ले-ता, दास भाव सवि जाई ॥ से० ॥ १ ॥

अर्थ –हे जिनराज ! साचे मने सेवानु सार फल आपजो पण हे भाई ! सेवानु फल मागशो नहि कोई काईनी सेवा करी तेनी महेनतनु फल मागे तो तेनी सेवानो कामी नथी पण तेना दाम रूप फलनो कामी छे जो दाम रूप फलनो कामी छे तो तेमां प्रभुनु दासपणु शु ? पोताना दाम रूप फलनु दासपणु थयु एटले स्वामीनु दासपणु न रह्युं माटे कामना रहित सेवा करवी ॥ १ ॥

भक्ति नहि ते तो भाडायत, जे सेवा फ-ल जाचे ॥ दास तिके जे घन भरि निरखी, केकीईनी परे माचे ॥ सेवा० ॥ २ ॥

अर्थः-जे सेवाना फलने ईच्छी सेवा करे ते भक्तिवंत नथी पण भाडायत छे. दास तेनेज कहीए जे सदा स्वामीना हित समुदायमां राजी रहे-वर्त्ते, स्वामीने गुण थाय एम जूए वली स्वामीनी ईच्छाए वर्त्ते जेम केकई राणी पोताना दशरथ स्वामीनी भक्तिमां अत्यंत रची मची रहेती हती तेम फल-कामना रहित प्रभुनी आज्ञाए वर्त्ते ते साचो सेवक जाणवो ॥ २ ॥

सारी विधि सेवा सारंतां, आण न कांइ भाजे ॥ हूकम हाजर खिजमति करतां, सह-जे नाथ निवाजे ॥ सेवा० ॥ ३ ॥

अर्थः-सकलप्रकारे रुडी विधिए आणा सेवीए अने कांई पण आणा विराधीए नहीं वली प्रभुना हूकममा हाजर रही खीजमत करीए तो सहजे स्वामीनी मेहेरबानी फले ॥ ३ ॥

साहिब जाणो छो सहु वाते, शु कहीए तुम आगे ॥ साहिब सनमुख अमे मागणनि वात करमी लागे ॥ से० ॥ ४ ॥

अर्थः–साहेब पोते केवलज्ञाने करीने सर्वे जाणो छो के जे सेवामा हाजर छे ते परमानंदना कामी छे तो हमे तुम आगे शु कहीए ? पण साहेब सन्मुख हमे मागण कांई मागवा रूप वात करीए तो ते वात असोहामणी लागे माटे जाणीए छिये के जे प्रभुनी अखंड आणा सेवशे ते अखंड अचिंत्य फल पामशे ॥ ४ ॥

स्वामि कृतारथ तो पण तुमथी, आश सहुको राखे ॥ नाथ विना सेवकनी चिंता, कोण करे विणु दाखे ॥ सेवा० ॥ ५ ॥

अर्थ–शुभ क्रियानो स्वामी ते शुभ फल पामे अने शुद्ध स्वभाव प्रयत्नीनो स्वामी शुद्धात्म संपदा पामे ए निश्चय छे पण प्रभुजी जेवा परम दयालुनी आशा तो सर्वे राखे. माहरा जेवा रंक पुरुषोने मोक्ष मार्गमा प्रेरवावाला नाथ विना हमारी चिंता कोण मिटावे ? एटले हमारु चिंतित देखाड्या विना कोण हमारी चिंता करे ? वली हमारु चिंतित प्रभुजी तमे जाणोज छो पण बालकनी पेठे महारेथी बोल्या विना न रहेवाय तेथी कहु छु ॥ ५ ॥

तुज सेवा फल माग्यो देतां, देवपणो थाये काचो ॥ विण माग्यां वांछित फल आपे तिणे देवचंद्र पद साचो ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थः-जेणे तमने सेव्या तेनु फल तमे तेने माग्यु आपो तो तमे सेवाना अर्थी अथवा रागी कहेवाव तेथी तमारु देवपणु काचु गणाय पण माग्या विना वंछित फल आपो छे तेथी तमारु देवमां चंद्रमा समान परम देवपद साचुज छे ॥६॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ विंशतिम श्री धर्मेश्वर जिन स्तवन ॥

अखीयां हरखन लागी हमारी अखीयां ॥ ए देशी ॥ राग प्रभाती ॥

हुं तो प्रभु वारि छुं तुम मुखनी, हुं तो जिन बलिहारी तुम मुखनी ॥ समता अमृत-मय सुप्रसन्ननी, तरेय नहीं राग रुखनी ॥ हुं० ॥ १ ॥

अर्थः-हे जिनेश्वर ! तमारा मुखनो हुं वारी

जाउ-बलिहारी जाउ छु एटले हे जिनेश्वर ! तमारा मुख कमलनी जे वाणी वरसे छे ते सफल जीवोना पाप मेलने धोवावाली छे जीवो स्वपर द्रव्य अने भाव प्राणनी हाणी करी व्यवहार अने निश्चयथी स्वपर सुखनी हाणी करे छे पण प्रभुजी माहणतानो उपदेश करी मरुल जीवना द्रव्य भाव प्राणनी हाणी थती अटकावे छे ते द्रव्य प्राण-इन्द्रियो (५) बल (३) श्वासोश्वास (१) आयुष्य (१) एम मूल चार छे अने तेना उत्तर भेद दश छे अने भाव प्राण ज्ञान दर्शन चरण अने वीर्य ए मुख्य चार छे तेना उपर भेद अनेक अथवा अनंत पण छे द्रव्यप्राणे करीने जीव व्यवहारिक सुख भोगवे छे अने ते द्रव्य प्राण नी हाणी करवाथी बे प्रकारनु दु:ख थाय छे जेम स्पर्श इन्द्रियनी हाणी करवाथी ते स्पर्श इन्द्रियनु छेदन भेदन थाय तेनु दु:ख उपजे छे अने स्पर्श इंद्रिय वडे जे जे सुख लेतो भोगवतो होय ते सुख जाय तेनु दु:ख पण जीव भोगवे छे तेमज रसना इंद्रियने छेदवाथी ते छेदन भेदननु दु:ख उपजे छे अने रसनाए करीने विविध प्रकारना स्वाद लेतो होय ते जाय तेनु दु:ख उपजे छे एमज पांचे

ईंद्रियोमां पण जाणवु वली कायवलनो नाश कर-वाथी दुःख उपजे छे अने कायवल वडे जे सुख लेतो होय ते जाय तेनुं दुःख थाय छे एम वचनवलमां अने मनवलमां पण जाणवु वली श्वासोश्वासनी हाणी करवाथी श्वासोश्वास रोकायानुं दुःख उपजे छे अने श्वासोश्वास वडे जे सुख लेतो हतो ते सुख जाय तेनुं दुःख थाय छे अने आयुष्यनी हाणी करवाथी आयुष्य हाणीनु दुःख उपजे छे अने आयुष्य वडे जे सुख लेतो हतो ते सुख जाय तेनुं दुःख उत्पन्न थाय छे एम ए दशे द्रव्य प्राणनी हाणी थी वेदना, भय, शोक, कषायादि दुःख उपजे छे अने अवेदना निर्भय अशोक अकषायनुं सुख नाश थाय ते दुःख उपजे छे वली ए द्रव्यप्राणनी हाणी करता जीव एक एकथी वैर विरोध बांधी, वैर वि-रोधनी परंपरा वधारी प्राये अनंतकाल सुधी दुःखी थाय छे वली ए द्रव्यप्राणनी हाणी ते स्वपर भाव-प्राणनी हाणीनु कारण पण थाय छे तेथी ज्ञाना-वरणादिक आठे कर्म पोते बांधी, अने बीजाने पण कर्मबंधना कारण थई अनंत काल संसारमां रूले रूलावे छे हवे भावप्राणमां अज्ञान आदरी अज्ञान

पथ विभाव सन्मुख जयावाली नथी ॥ १ ॥

भ्रमर अधर सिस धनु हर कमल दळ, कीर हीर पुन्यम शशीनी ॥ शोभा तुछ प्रभु देखत याकी, कायर हाथे जिम असिनी ॥ हुं० ॥ २ ॥

अर्थ.-प्रभुना भ्रमर आदिकनी शोभा देखतां कमल दल कीर हीर पूनम शशि आदिकनी सर्व शोभा ते तुच्छ देखाय छे उपमेय आगल जे जे उपमा कही ते सर्वे कायर हाथे तरवार सरखी जाणवी एटले प्रभुना रूपने अन्य उपमा सभवेज नहीं माटे अनुपम रूप छे ॥ २ ॥

मन मोहन तुम सनमुख निरखत, आंख न तृपति अम्हची ॥ मोह तिमिर रवि हरख चद्र छवी, मुरत ए उपसमची ॥ हुं० ॥ ३ ॥

अर्थ.-हे मनने प्रमोद आपवावाला ! तमारा सन्मुख जोता हमारी आंख तृप्ती पामती नथी एटले पेगली उसथा चाहाती नथी वली प्रभुनी

थी मोहतिमिरने हरवा सूर्य समान अने हरख पजाववाने पूनमना चंद्रमा सरखी उपशम रसे करी उपशम रस वरसावती आनंद आपनारी छे ॥३॥

मननी चिंता मेटी प्रभु ध्यावत, मुख देखंता तुम जिनजी ॥ इंद्रि तृपा गई जिनेश्वर सेवतां, गुण गाता वचननी ॥ हु० ॥४॥

अर्थः-प्रभुनी निर्मल ज्ञानादिक गुण ध्याता अने प्रभु मुखथी शुद्ध नय स्याद्वाद अमृत मय वचन सांभली प्रभु रूप देखतां हमारूं रूप सिद्ध समान जाणी मननी चिंता मटी गई. जिनवर सेवतां अने वचने करी प्रभु गुण गाता इंद्रिय विषयोनी तृष्णा समी गई ॥ ४ ॥

मीन चकोर मोर मतगज, जल शशी घन नीचनथी ॥ तिम मो प्रति साहिब सुरतथी, और न चाहुं मनथी ॥ हु० ॥ ५ ॥

अर्थः-मत्स्य जेम पाणी थी, चकोरपक्षी चंद्रमा देखीने, मोर मेघ देखीने अने हाथी तलाव आदि नीरवाळी जगाए जगायां जेम मग्न रहे छे तेम मने

साहेबनी सूरत देखी परम आह्लाद उपजे छे तेथी प्रभुनी प्रभुता शिवाय हु अन्य पदार्थो कुदेव कुरचनादि चाहातो नथी ॥ ५ ॥

ज्ञानानंदन जाया नंदन, आस दास नीयतनी ॥ देवचंद्र सेवनमें अहनिश, रमज्यो परिणति चित्तनी ॥ हु० ॥ ६ ॥

अर्थ –हे ज्ञानानद दातार ! जाया माताना नदन, जाया माताने आनद आपनार, दासनी निश्चय शुद्ध स्वरूपनी आशा पुरो देवचद्र मुनि कहे छे के हमारा चित्तनी परिणति प्रभु आज्ञा सेवामा अह निश रमज्यो ॥ ६ ॥ ॥ सपूर्ण ॥

। अथ एकविंशतिम श्री शुद्धमती जिन स्तवन ।

श्री जिन प्रतिमा हो जिन सरखी कही ॥ ए देशी ॥

श्री शुद्ध मति हो जिनवर पूरवो, एह मनोरथ माल ॥ सेवक जाणी हो महेरबानी करी, भव सकटथी टाल ॥ श्री० ॥ १ ॥

अर्थ –श्री शुद्धमती जिनेश्वर हमारी मनोरथ माला पूरी करो मने तमारो सेवक जाणी महेर-

थानी करी भव संकटथी उगारो ॥ १ ॥

पतित उद्धारण हो तारण वच्छलु, करे अपणायत एह ॥ नित्य निरागी हो निस्पृह ज्ञाननी, शुद्ध अवस्था देह ॥ श्री० ॥ २ ॥

अर्थः—जेने ताहरा वचननी सम्यक प्रकारे रुचि पतित छे तेने तुं संसार समुद्रथी उद्धारवावालो अने वात्सल्यता राखी तारवावालो छु तो हमने पोताना जाणी अपणायत कर. प्रभु तुं नित्य निरागी पर जन परवस्तुनी स्पृहा रहित ज्ञानमय शुद्ध अवस्थावंत छु अने ताहरो शुद्ध ज्ञायक देह छे। २।

परमानंदि हो तुं परमातमा, अविनाशी तुज रीत ॥ ए गुण जाणी हो तुम वाणी थकी, ठहराणी मुज प्रीत ॥ श्री० ॥ ३ ॥

अर्थ—प्रभु उत्कृष्ट आनंदवंत परमात्मा छो. आत्मा तो जीव मात्र कहेवाय छे पण ते पोते पोताना परमभाव भोगी नथी पण प्रभु अखंड समय परम स्वतंत्र भाव भोगी माटे परमात्मा छो तमे जे स्वभाव आणंद लेवानी रीत ग्रही ते ताहरी

रीत अविनाशी छे. प्र-गुण तमारी वाणीथी में जाणी अन्यथी प्रीत तोडी तुमथी प्रीत जोडी छे।३।

शुद्ध स्वरूपी हे ज्ञानानदनी, अव्याबाध स्वरूप ॥ भवजल निधि हो तारक जिनश्व, परम महोदय भूप ॥ श्री० ॥ ४ ॥

अर्थ-प्रभु स्वद्रव्य क्षेत्र काल अने भावे पूर्ण शुद्ध स्वरुपी ज्ञानानदमय ज्ञानानदी छो, सकल समय अव्याबाधमयी छो, हे जिनेश्वर ! तमे भव-दरियेथी अमने तारवावाला छो अने पूर्ण सिद्धि पद रुप परम महोदय पदवीना राजा छो ॥ ४ ॥

निरमम निसंगी हो निरभय अविकारता निरमल सहज समृद्धि ॥ अष्ट करम हो वन दाहथी, प्रगटी अन्वय रिद्धि ॥ ५ ॥

अर्थ-तमारे कोई परद्रव्य गुणपर्यायनु ममत्व नथी तेम तेनो संग पण नथी तेथी भय अने कोई प्रकारनो विकार पण नथी अने तमारे ससाम्य राज रिद्धि अनती सहज स्वनश्र निर्मल छे अष्टकर्म रुप वन ध्यानाग्नि थमी प्रजाल्यु तेथी तमारे ज्ञानादि

अखूट निर्मल रिद्धि प्रगट थई छे ते अनंत कालसुधी खरच्यां पण खूटे नहि ॥ ५ ॥

आज अनादिनी हो अनंत अक्षता, अक्षर अनक्षर रूप ॥ अचल अकल हो अमल अगमतु, चिदानंद चिद्रूप ॥ श्री० ॥ ५ ॥

अर्थः--प्रभुजी आज तमारे अनादिनी सत्तागते अक्षयपणे रहेली अनंत रिद्धि अने शक्ति व्यक्त थई छे ते अक्षर अने अनक्षर रूप के० वचन अक्षरपणे अनंती कही शकाय एवी अक्षर रिद्धि अने तेथी अनंत गुणी वचन आलापमां न आवे एवी अनक्षर रिद्धि स्वतंत्र प्रगट थई छे तेथी तमे अचल तथा अगम के० छद्मस्थ जीवोने तमारा स्वरूपनी छद्मस्थज्ञाने पूर्ण गम न पडे तथा छद्मस्थ मतिए करी तमारू रूप रिद्धि अने आनद कली शकाय नहि तथा तमारू रूप रिद्धि पुद्गलीक अन्यपदार्थो भेगु मली जाय नहीं तेथी तमे अमल एवा ज्ञानानदमय ज्ञान रूप छो ॥ ६ ॥

अनंत ज्ञानी हो अनंत दर्शनी, अनाकारी अविरूद्ध ॥ लोकालोक हो ज्ञायक सुहंकरू,

-अनाहारी स्वय बुद्ध ॥ श्री० ॥ ७ ॥

अर्थः—तमे अनत ज्ञानी अने अनत दर्शनवंत छो तथा आकार रहित रूपर जीवथी अविरुद्ध लोकालोकना ज्ञाता द्रष्टा सकल जीवोनो सुखना कारण छो तमारे काई पण आहारनी जरूर रहेती नथी तेथी अनाहारी छो पोते पोताथीज बोध पामेला माटे स्वयबुद्ध छो ॥ ७ ॥

जे निज पासे हो ते शु मागीए, देवचंद्र जिनराय ॥ तो पण मुजने हो शिवपुर साधतां, हो जो सदा सुसहाय ॥ श्री० ॥ ८ ॥

अर्थः—ज्ञानानदादि अनत कार्योनो सत्ता हमारी हमारा पासेज छे तो प्रभुजो पासे शु मागीए ? पण देवोमां चद्रमा समान हे जिनराज ! हमने मोक्षमार्ग साधता सदाए तमे सुसहाय थजो ॥८॥

॥ सपूर्ण ॥

॥ अथ द्वाविंशतिम श्री शिवकर जिन स्तवन ॥

शिवकर जिनवर देव, सेव मनमा रमे हो लाल सेव मनमां रमे ॥ तन्मयताए ध्याय,

तेह भव भय वमे हो लाल तेह० ॥
त्रिपदी प्ररूपी सार, जगत जन तारवा हो-
लाल जगत० ॥ द्रव्य अनंत प्रजाय, प्रमेय
विचारवा हो लाल प्रमेय० ॥ १ ॥

अर्थः—सकल अशिव दूर करी सर्व प्रकारे शिव करवावाला एहवा शिवकर नामे गत चोविशीमां बाविशमा तीर्थपति केवलज्ञान दर्शनादि गुणे देदिप्यमान देवनी आणानुं सेववु ते माहरा मनमां रमे छे अथवा भविजीवोना मनमां रमो के जेमी आणा सेववाथी आत्मा शिवपद पामेछे पण ए प्रभुनी सेवा तन्मयताए व्यायके॰ प्रभुजी जेम राग द्वेष छोडी शुद्ध थिर सम परिणामे ज्ञान दर्शन चरणादि आत्मगुणोमां रम्या तेज प्रमाणे भविजीव पण राग द्वेष छोडी सम परिणामी थई मुख्य दर्शन ज्ञान चरणमय आत्म स्वभावमां थिर योगे रमे तो सकल भवभय वमे एटले भव करवानो भय तेने रहे नहि अने निर्वाणपद पामे करुणा भंडार जिनेश्वरे जगत् जीवोने तारवा माटे प्रथम सार त्रिपदी प्ररुपी अने सर्व तीर्थंकरो अनादिथी प्रथम त्रिपदीज

प्ररुपे छे के जेथी भवि जीव आत्म अनात्म स्वरुप भिन्न जाणी पोताना उपयोग आत्म शुद्धतामा थिर करी शके छे ज्यांसुधी शुद्धात्म स्वरुपनु ज्ञान न होय त्यांसुधी पुद्गलादि परद्रव्यनी ममता अने मिथ्यात्व अविरति आदि कर्मबंधना कारणो शरु रही आठे प्रकारे कर्मबंध थया करे छे, पण ज्यारे भिन्न भिन्न द्रव्यनो उत्पाद व्यय अने ध्रुवतारूप परिणति भिन्न भिन्न जाणे त्यारे परद्रव्य उपर ममता शांती रहे ! अने परद्रव्यमा आपणु कार्य केम मनाय ! अने परद्रव्यमां आपणु कार्य मनाय नहि त्यारे राग द्वेष अने शुभाशुभ संकल्प पण उपजे नहि एटले जीव शुक्लध्यान पामी प्रथम घाती कर्मनो नाश करी आगर सिद्धि पामे त्रिपदी एटले षद्यास्ति द्रव्य सकल समय आप आपणा पूर्व पर्यायनो व्यय, नौतन पर्यायना उत्पाद अने सत्तानु ध्रुव राखवु करे छे एटले नव नवे समय नवि नवि परिणति करे छे, अने मूल गुणो ध्रुव रहे छे कोई द्रव्य कोई अन्य द्रव्यना पूर्व पर्यायनो व्यय, नौतन पर्यायनो उत्पाद अने तेनी सत्तानु ध्रुव राखवु करी शकतो नथी तेथी सर्व द्रव्यनो सामान्य विशेष

शक्ति साक्षात्कार भिन्न जणाय छे त्यारे भवि जीवने ममता टळी जाय छे अने ममता विना राग द्वेष रहेता नथी एटले सुखे संजम साधी सिद्धि पामे छे. द्रव्य विषे भगवंते कह्यु " उपनेवा, विगमेवा, ध्रुवेवा " एटला उपरथी गणधरो एक मूहूर्त्तमां द्वादशांगनी रचना करे छे अने द्वादश अंगवडे जगत्मां बोधनो विस्तार कराय छे आपणे पण वस्तुनी त्रिपदी संभालीए ते परद्रव्यनु ममत्व टली उपयोग आत्म शुद्धतामा थिर थाय छे माटे त्रिपदीनो अर्थ विचारी परद्रव्यथी भिन्न आत्म शुद्धता जाणी आत्म शुद्धताना कामी थई सिद्धि सुख साधवु प्रभुजीए तीर्थंकर नामकर्मना उदयवडे भवि जीवोने तारवा त्रिपदी प्ररूपी तो आपणे तेमनो परम उपकार सन्मानी तेमनी आणा समय मात्र पण न चूकता सेववी त्रिपदीनो पूर्ण भावार्थ तो केवली पोताना केवलज्ञानमां जाणे छे अने आदेश वशे श्रुतज्ञानी पण पूर्ण भावार्थ श्रद्धा गोचर जाणे छे अने द्रव्य थकी द्रष्टिवाद अगमा कह्या प्रमाणे अर्थ छे पण अहिंआं संक्षेपथी लखीए छिये के पचास्ति द्रव्यना प्रति प्रदेशे स्वस्व

कार्य करवाना करण रूपे अस्तिपणे छति पर्याय तीरोभावे ( गुप्तपणे ) अनता अनता, छे जेम जीव द्रव्यना असंख्याता प्रदेश छे ते दरेक प्रदेशे जाणवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, देखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, आचरण रमण रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, वीर्य अचल राखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता तेम दान देवा रूप, लाभ लेवा रूप, भोग उपभोग भोगववा रूप सुख आनदादि अनत कार्य धर्मना छति पर्यायो प्रति प्रदेशे अनता अनता अस्तिपणे छे ते छति पर्यायोमाथी समय पामीने अनता पर्यायो स्वकार्य करवाने आविर्भावे उपजे अने प्रथम समय जे पर्यायो आवीर्भावे आवेला होय ते आवीर्भावथी विणसी तीरोभावे जाय अने तीरोभावे रहेला पर्यायोमाथी केटला आवीर्भावे उपजी कार्य करे उक्तच " उत्पाद व्यय ध्रुव युक्त सत् लक्षण द्रव्यं एटले नवा पर्यायनु भवन अने पूर्व पर्यायना व्यय विना कोई पण कार्य थई शकतु नथी उत्पाद व्यय थई कार्यनु करवु एज द्रव्यनी सत्ता छे पण पर पर्यायनु भवन व्यय कोई अन्य द्रव्य करी शकतो

नथी एम जाणवा पछी आपणु कार्य पर द्रव्यमां भासे नहि तो पर द्रव्य ऊपर राग रोष पण रहे नहि ॥ उत्पाद व्यय खट गुणी हाणीवृद्धिपणे थाय छे ते बीजा ग्रंथोथी जाणी लेजो त्रिपदी वडेज अनन्त द्रव्यना अनंत पर्यायना प्रमेयनो बोध थाय छे माटे परम उपकारी प्रभुजीए त्रिपदी प्ररूपी ए समान बीजो उपकार नथी ॥ १ ॥

जगमां द्रव्य अनंत, उतपती व्यय ध्रुव रहे हो लाल उत० ॥ जे जे जेहना ते तेहना तेह मांही लहे हो लाल तेह० ॥ जाणी भेदे विभाव, अनंतने जे नरा हो लाल अनंत० ॥ पाम पूर्णानंद, आतम संपति धरा हो लाल आतम० ॥ २ ॥

अर्थ –जगत्मां एक धर्मास्ति, एक अधर्मास्ति आकाश, अनंता जीव तथा अनंत पुद्गल ए प्रकारे अनंत अस्ति द्रव्य छे अने काल ते अस्तिनो वर्त्तना पर्याय रूप अनंत द्रव्य उपचारथी धर्मास्ति कायादि पचे अस्ति द्रव्य सर्वे

कार्य करवाना करण रूपे अस्तिपणे छति पर्याय तीरोभावे ( गुप्तपणे ) अनता अनता, छे जेम जीव द्रव्यना असंख्याता प्रदेश छे ते दरेक प्रदेशे जाणवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, देखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, आचरण रमण रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, वीर्य अचल राखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता तेम दान देवा रूप, लाभ लेवा रूप, भोग उपभोग भोगववा रूप सुख आनदादि अनत कार्य धर्मना छति पर्यायो प्रति प्रदेशे अनता अनता अस्तिपणे छे ते छति पर्यायोमाथी समय पामीने अनता पर्यायो स्वकार्य करवाने आविर्भावे उपजे अने प्रथम समय जे पर्यायो आवीर्भावे आवेला होय ते आवीर्भावथी विणसी तीरोभावे जाय अने तीरोभावे रहेला पर्यायोमाथी केटला आवीर्भावे उपजी कार्य करे. उक्तच " उत्पाद् व्यय ध्रुव युक्त सत् लक्षण द्रव्य एटले नवा पर्यायनु भवन अने पूर्व पर्यायना व्यय विना कोई पण कार्य थई शकतु नथी उत्पाद व्यय थई कार्यनु करवु एज द्रव्यनी सत्ता छे पण पर पर्यायनु भवन व्यय कोई अन्य द्रव्य करी शकतो

नथी एम जाण्या पछी आपणुं कार्य पर द्रव्यमां भासे नहि तो पर द्रव्य ऊपर राग रोष पण रहे नहि ए उत्पाद व्यय खट गुणी हाणीवृद्धिपणे थाय छे ते बीजा ग्रंथोथी जाणी लेजो त्रिपदी वडेज अनत द्रव्यना अनत पर्यायना प्रमेयनो बोध थाय छे माटे परम उपकारी प्रभुजोए त्रिपदी प्ररुपी ए समान बीजो उपकार नथी ॥ १ ॥

जगमां द्रव्य अनंत, उतपती व्यय ध्रुव रहे हो लाल उत० ॥ जे जे जेहना ते तेहना तेह माही लहे हो लाल तेह० ॥ जाणी भेदे त्रिभाव, अनतने जे नरा हो लाल अनंत० ॥ पाम पूर्णानंद, आतम सपति धरा हो लाल आतम० ॥ २ ॥

अर्थ -जगत्मां एक धर्मास्ति, एक अधर्मास्ति एक आकाश, अनता जीव तथा अनंत पुदगल ए पच प्रकारे अनत अस्ति द्रव्य छे अने काल ते पचास्तिनो वर्त्तना पर्याय रूप अनत द्रव्य उपचारथी छे अने धर्मास्ति कायादि पचे अस्ति द्रव्य सर्वे

सकल समय छे एम जे शुद्ध रीते निःशंकपणे जाणे अने जे जेनी ते तेनामा माने तेने मिथ्यामति रहे नहि अने परिणामथी मिथ्यात्व गया पछी सत्तामा पण रहेला मिथ्यातना दलीआ ते पण क्षय जाय जगत्मा पद्यास्ति द्रव्य स्वद्रव्य क्षेत्र काल भाव अस्तिपणे शाश्वता छे तेमा पर द्रव्यादिक रूपे न थवानो स्वभाव पण अस्तिपणे छे तेने नास्ति स्वभाव कहीए एटले स्वधर्म छता रहे पण परधर्म रूपे थाय नहि ए द्रव्यनु अस्तिपणु ते प्रथम सामान्य स्वभाव जाणवो ॥ ४ ॥

निज निज वस्तु स्वभाव, न छडे को कदा हो लाल न छडे० ॥ दर्वे निज पर्याय, रुके नहि को कदा हो लाल रुके० ॥ सहज प्रमेय प्रमाण, सदा सहु परिणमे हो लाल सदा० ॥ अगुरुलघु परजाय, स्वकार्यमा सहु समे हो लाल स्वकार्यमा० ॥ ५ ॥

अर्थ.-(२) सव द्रव्य आप आपणो वस्तु स्वभाव कोई पण कदापी छोडे नहि ते वस्तुत्व कहीए

(३) द्रव्य मांहे जनक स्वभाव छे ते सकल समय छती पर्यायोने सामर्थ्यपणे उपजावे अने सामर्थ्य पर्यायने पोतामाज तीरोभावे दबे (सेनाव) एम छती अने सामर्थ्य बे भेदे पर्यायनी उत्पत्ति व्यय प्रवृत्ति कोई समय पण कोई रीते रोकाय नहि ते द्रव्यत्त्व स्वभाव कहीए

(४) द्रव्यना सर्वे स्वभावो सर्वे समय आप आपणा प्रमेय प्रमाणे परिणमे छे कोई द्रव्यनो एक स्वगुण ते बीजा स्वगुणनु कार्य करे नहि अने पर द्रव्यना कोई गुणनु कार्य पण करे नहि ने स्वकार्य विना कोई समये खाली पण रहे नहि आप आपणी मर्यादा मूके नहि तेथीज सकल द्रव्य गुण पर्यायनु प्रमाण ज्ञान वडे करी शकाय छे ए प्रमेयत्त्व स्वभाव जाणवो

(५) गुणोना छती पर्यायो प्रदेशे प्रदेशे अनंता अनंता छे ते खट गुण हाणीवृद्धि पणे आवीर्भाव तीरोभावे सर्वे प्रदेशे सर्वे समय थया करे छे तेथी कोई द्रव्य हलको अगर भारे थाय नहि एहवो अगुरुलघुत्त्व स्वभाव जाणवो

विगमे पुरव प्रजाय, नऊतन उपजे हो लाल नऊतन० ॥ पण ध्रुव शक्ति सदाय, सत्त्व लक्षण भजे हो लाल सत्त्व० ॥ ए सामान्य स्वभाव, ते जेहना तेहमा हो लाल ते जेहना० ॥ वलि विशेष स्वभाव, ते जेहना जेहमा हो लाल ते जेहना० ॥ ६ ॥

अर्थ.-(६) पूर्व पर्याय विणसता अने नवा पर्याय उपजता द्रव्य आप आपणु कार्य करता छतां पण सत्ताने छोड़तो नथी ते सत्त्व लक्षण छे यत "अर्थ क्रिया कारित्वं द्रव्य" जो द्रव्य सर्व समय आप आपणु कार्य न करे तो सत्त्व लक्षण केम रहे !

एम सर्व द्रव्यना छ मूल सामान्य स्वभाव तथा उत्तर सामान्य स्वभाव तथा अनंत विशेष स्वभाव जे जेना ते तेनामां जाणवा मानवा कोई द्रव्यनो सामान्य अथवा विशेष स्वभाव कोई अन्य द्रव्यमा जाय आवे नहि एम जाणवाथी निर्विकल्प बोध प्रगट थाय छे ॥ ६ ॥

लक्षण लक्ष्य अभेद, त्रिकालपणे रहे हो लाल त्रिकाल० ॥ एम जाणी नर बुझने ममता नवि रहे हो लाल ने ममता० ॥ आत्म ज्ञान विण ममत, ममतथी मिथ्यात छे हो लाल ममतथी० ॥ एहथी अविरति होय, प्रमाद कषाय छे हो लाल प्रमाद० ।७।

अर्थः-लक्ष्य के० द्रव्य अने तेना अनंत पर्याय रूप लक्षणो ते द्रव्यथी त्रिकाले अभेदपणे होय एम जे पंडित जाणे तेने परद्रव्य गुण पर्यायनी ममता रहे नहि एटले तेने परद्रव्यादिनो राग व्यतीत थाय ज्यांसुधी आत्म शुद्धतानु ज्ञान नथी त्यांसुधी परद्रव्यादिनी ममता रहे अने ममता होय त्यांसुधी मिथ्यात्व रहे अने तेथी अविरति प्रमाद कषायादि दोषो उपजे ज्यारे आत्म शुद्धतानुं ज्ञान थाय त्यारे ममता अने मिथ्यात्व टले त्यार पछी अविरति प्रमाद कषायादि सर्वे दोषो नाश पामे. माटे आत्म सिद्धतानुं मूल आत्म शुद्धतानुं ज्ञान

छे ए विना एकाते साध्य शून्य क्रिया विरथ
रूप छे ॥ ७ ॥

जोग चपलता करि निज, वीरज चल
करे हो लालके वीरज० ॥ वधे आठे कर्म,
गहन भव वन फरे हो लाल गहन० ॥ वाल
बाधक थयु वीर्य, साधकता नवि लही हो
लाल साधकता० ॥ शिवकर देव हृदयमा,
करुणा लह लही हो लाल के करुणा० । ८ ।

अर्थ –अविरति प्रमाद कषायादिके जोग चप
लता थाय छे अने जोग चपलता वडे आत्मवीर्य
पण चलायमान थई ज्ञानावरणादि आठे कर्मनो
बंध करी जीव गहेरा भव वनमां फरतो स्वतंत्रता
विना असह्य दुःख भोगवे छे उक्तंच–भगवई अंग
" चलई फदई " आत्म शुद्धतानु पूर्ण ज्ञान
थयापछी जीवने परद्रव्यनी स्पृहा इच्छा कामना
मनोरथ थतो नथी माटे त्रणे योग पूर्ण थिरता पामे
छे आत्मवीर्य अचल थाय छे जे जे अंशे आत्म-
वीर्यनु चलपणु ते ते अंशे कर्मबंध छे जे

आत्मवीर्यनु अचलपणु थयु ते ते अंशे पूर्ण कर्मबंध विलय जाय अने नविन बंध करे नहि, आत्मवीर्यनी पूर्ण स्थिरता वडे पूर्ण सिद्धि प्राप्त थाय माटे शुद्धात्म ज्ञानमां लयलीन थवु एज श्रेय छे कोई कहेशे के हु आत्मज्ञानी छु पण ते राग द्वेषमां वर्त्ततो होय तो तेने पूर्ण आत्मज्ञानी जाणवो नहि पण जे जे अंशे राग गयो ते ते अंशे आत्मशुद्धता प्रगट थाय छे अने तेटलुज आत्मज्ञान जाणवु अने ज्यां आत्मशुद्धता पूर्ण प्रगट थई त्यां रागनो अंश मात्र रहेतो नथी पूर्ण क्षायक वीतरागता प्रगट थई एटले मोहनीय कर्मनो नाश थयो अने बारमा गुणठाणाना छेल्ला वे समयमां ज्ञानावरण दर्शनावरण अने अंतरायनो नाश थाय छे अने बाकीना चार आघाती कर्म रह्या ते स्थितिए नाश थाय छे एम जीवने परमानंद प्राप्त थाय छे माटे ज्ञाने करी आत्मशुद्धता वधारवी एज मोक्ष मार्ग छे आत्माना ज्ञान दर्शन चरणादि आत्माथी अभेदपणे रहेला गुणाने निर्मल करवा ते आत्म शुद्धता कहीए अने तेज मोक्षमार्ग छे. जे जे अंशथी राग द्वेषनी उपाधि गई ते ते अंशे ज्ञान दर्शन चरणरूप आत्मगुणना

अशो प्रगट थया एम जाणवु आत्मज्ञान विना परद्रव्यनी ममताए आत्मवीर्य घात्यु बाधकभावने पाम्यु करणवीर्यपणे प्रवर्त्यु साधकता जाणी नहि अने साध्य जाणयो नहि साध्य जाणया विना शु साधे ? साधकता जाण्या विना केवी रीते साधन करे ? मात्र साध्य शून्य क्रिया करी शुभाशुभ परिणामे भव भ्रमण करे. एम जाणी शिवकर देवना हृदयमां करुणारस उभरायो तेथी भविजीवोने तारवा अर्थे त्रिपदी प्ररूपी ॥ ८ ॥

शुद्ध अखंडित धार, अमृत घन वरसता हो लाल अमृत० ॥ प्रभुजी मेघ समान, भव्य द्रग दरसता हो लाल भव्य० ॥ पूजो श्री प्रभु अंग, सुरंगे उमही हो लाल सुरंगे० ॥ दरशन ज्ञान चारित्र, सवीर्य मयी सही हो लाल सवीर्य० ॥ ९ ॥

अर्थ –मेघरूप प्रभुजी शुद्ध स्याद्वादनी देशनारूप अखंड अमृतघन धारा वरसावता भवि जीवोना अज्ञान मिथ्यात्व कषायादि भवदव ताप

समावता शुद्धात्म भावमा थिरता करावता भवि समकितीनी द्रष्टिमा अमृत मेघ सरखा देखाय छे प्रभुजीनु अंग पूजो एटले ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि अनंत शुद्ध गुणमय प्रभुजीना अरूपी अंगने परम आदरे मनने सुरंगे ए सम शुद्ध ध्येय जाणी आनंद सहित पूजो तथा देशनानुं कारण एहवा प्रभुजीना औदारिक अंग-(१) चरणांगुष्ठ (२) जानु (३) कर (४) भूजाखंध (५) शिर (६) भाल स्थल (७) कंठ (८) हृदय (९) नाभि एम नव मुख्य तथा ते सिवाय नयण वदनादिक प्रभुना सर्वे अंग सुगंधी द्रव्ये पूजवा लायक छे एम जाणवुं ए अंगपदेश देश विदेश फरी शुक्लध्यान करी केवलज्ञान उपजावी आपणने शुद्ध साध्यनी देशना आपे छे माटे प्रभुना सर्वे अंग बहु सन्माने बहु विधे पूजवा ला-यक छे ॥ ९ ॥

जाणे द्रौपदी शुद्ध ते ध्यान शुकल लहे हो लाल तें० ॥ घाती करम क्षय जाय अनंत चतुक लहे हो लाल अनंत० ॥ ए विण धर्म न शुक्ल लहे नहि नर कदा हो लाळ लहे०

ते माटे लहि त्रीपदी सुशिव साधो मुदा हो लाल सु० ॥ १० ॥

अर्थ -जे भवि शुद्ध रीते त्रिपदीना भाव जाणे तेज शुक्लध्यान पामे अने शुक्लध्याननो बीजो पायो ध्याता चारे घनघाती कर्मनो नाश करे अने अनंत चतुष्क पामे एम द्रव्यना उत्पाद व्यय ध्रुवादि त्रिपदीना भाव जाण्याविना जीव धर्मध्यान अने शुक्लध्यान कदापी पामे नहि ते माटे सिद्धांतमाथी त्रिपदीना मुख्य भाव जाणी सदाए आनंद सहित कर्मथकी मूकावा रूप गडो मोक्ष मार्ग साधवो ॥ १० ॥

अग पूजा करि एम, आणा आराधीए हो लाल आणा० ॥ लहि निज शुद्ध स्वरूप मोक्षमग साधीए हो लाल मोक्ष० ॥ महा-गोप महामाहण, शिव सथ्थवाह छो हो लाल शिव० ॥ निर्यामिक महावैद्य, परम जग नाह छो हो लाल परम० ॥ ११ ॥

अर्थ –ऊपर प्रमाणे जिनेश्वरना द्रुविद [illegible]
विविध प्रकारे पूजा सन्मान करी आज्ञा आराध[illegible]
अने पोतानु शुद्धात्म स्वरूप आधो पुरुषार्थ पराक्रम
करी धीर्य अचल गणी मोक्षमार्ग मार्ग[illegible] है
प्रभुजी ! तमे भवि जीव रूपी गायोने सम्यग्
बोध रूप सजीवनी चारो चरावी आत्म [illegible]
सचेत करी निर्विघ्नपणे मुक्ति रूप नगरे पहोंच[illegible]
छो माटे महागोप छो वली तमे पट्[illegible]
जीवोने कोईपण जीव कोई प्रकारे हणो [illegible]
अने तेमना द्रव्य प्राण तथा भाव प्राण [illegible]
करे नहवो माहणतानो उपदेश करो छो [illegible]
आचार्यादि मारफते पण माहणताना [illegible]
प्रेरणा करावो छो माटे तमे पोतेज मा[illegible]
वली तमे उपद्रव रहित शिव स्थान [illegible]
माटे शिवमार्ग के० मार्गमां क्रोध मोहादि [illegible]
काई हरकत करी शके नहि अने कुगुरु [illegible]
जनो उन्मार्गमा पाडी शके नहि एवा [illegible]
रहित मार्ग स्याद्वादमय शुद्धनये शुद्धात्म[illegible]
जणावी निर्विघ्नपणे लई जाउ छो माटे मोक्ष
सार्थवाह छो वली तमे ज्या राग द्वेष [illegible]

अज्ञान रूप खारु कडवु जेरी जल भरेलु छे अने कषायो रूप श्वापदोनु भारे जोर छे तथा ज्यां अथाह विकल्पोना कल्लोलो उछली रह्या छे तथा ज्यां काम वडवानल लागी रह्यो छे एहवा भव दरियामा बूडेला जीवोने शुद्ध सजम जहाजमां लई आत्म सत्तारूप आनदपुरी नगरीमां पहोंचाडो छो माटे निर्यामक छो वली जगवासी जीवोने लागेला अज्ञान मिथ्यात्व अविरति आदि दु साध्य रोगोने नाश करवा ज्ञान दर्शन चरण रमण मिश्रित उदासिनता रूप मृगांक पुटीनु सेवन करावी बलावले ते रोगोने मटावो छो माटे अमोघ परमवैद्य छो वली अशरण अनाथ उन्मार्गे पडेला एहवा जगवासी जीवोने सारण वारण चोयणा पडिचोयणा करी करावी निर्भय सुख स्थानमा लावो छो माटे तमे जगत्ना नाथ छो ॥ ११ ॥

चरण वदन कर नयण, परम जिनराजना

लाल महा० ॥ भवि जन पामे सिद्धि, तत्त्व निज शोधथी हो लाल तत्त्व० ॥ ११ ॥

अर्थः-प्रभुजी तमारा परम चरणवडे देश विदेश विहार करी भविजीवोने सम्यकज्ञान चारित्र रूप फल आपो छो तेथी तमे जंगम कल्पवृक्ष समान छो वली तमे तमारा वदन कमल वडे द्वादशांगनी देशना आपी शुद्ध साध्य साधन बतावी उपकार करो छो वली तमारा परम कर कमले करी दिक्षा शिक्षा आपी उपकार करो छो वली तमारा परम नयण कमल वडे भवि जीवो उपर अमृतमय द्रष्टिए देखी भविजीवोनी द्रष्टि शुद्धात्म सन्मुख करावो छो एम तमारा सर्व अंग अने सर्व पुण्य अतिशय भविजीवोने परम उपकार परम समाधिना कारण छे वली तमारा अंतरंग आत्मिक गुणो अने अगमा रहेला पुण्य अतिशयना गुणो आगल मणिमय मुकट कुंडलादिकनी शोभा तु तो हमे शु वखाण करीए ? मणि रत्न आदिना मुकट कुंडलादि आभूषणो तो संसारी विषयी चक्रवर्ती इंद्रादि घणा पेहेरे छे तो एहवा अजीव अने अथिर पदार्थनी शी शोभा ? एटले तमारा अंतरंग अने बाह्य सर्व

उत्तम लक्षणो भविजीवोने आत्म सुख काजमां पुष्ठ सहायकारी कारणो छे नाथनु महाविशाल कृपालपणु शुद्ध बोधथी हमने जणाय छे पण जे भवि जीव तमारा परम शुद्ध बोधन अति सन्माने आदरे अने तन्मय थई आतम तत्त्वनी शुद्धता करे ने सिद्धि पामे ॥ १२ ॥

पामे आतम ज्ञान दोष दुःख सहु टले हो
लाल दोष० ॥ सीझे आतम काज अचल
कमला मले हो लाल अचल० ॥ पूज्यनी
पूजा आपे शिवघर वासने हो लाल के शिव०
देवचंद्र मुनि मनसुख सहज० विलासने हो
लाल के सहज० ॥ १३ ॥

अर्थ.-तमारी आज्ञा सेवी जे जीव आत्म बोध पामे तेना सर्व दोषो अने दुःखो टले अने आत्म कार्य सिद्धि थाय वली केवलज्ञानादि अक्षय अचल लक्ष्मी मले वहा त्रिभुवन पूज्य शिवकर स्वामिनी सेवा शिवघर वास आपवावाली छे देवमा चंद्रमा समान शिवकर स्वामी मुनिओना राजा न

मनमुख उमंगे करी सेवतां सहज आत्मिक विलास पामे ॥ १३ ॥ ॥ संपूर्ण ॥



## ॥ अथ त्रयोविंशतिम श्री स्यंदन जिन स्तवन

॥ शांति जिनेश्वर केसर अर्चित जग धणीरे आ० ॥ ए देशी ॥

स्यंदन जिनवर परम दयाल कृपालुओरे ॥ जग सोहन भवि बोहन देव मयालुओरे ॥ दे० ॥ ए आंकणी ॥ परपद ग्रहणे जनजन बांधे कर्मनेरे, अथिर पदारथ ध्यातां किम लहे धर्मनेरे कि० जडचल जगनी एवं छे पुदगल परिणतिरे, ध्याता धीरज रूपे आप लहे न सगुण रतीरे लहे० ॥ १ ॥

अर्थ.-गत चोविशीना त्रेविशमा तीर्थंकर श्री स्यदन जिनेश्वर परम दयाल अने परमकृपाल छे जगत्मां जे जे लोको शुद्धमार्गना अजाण दया अने कृपा करे छे ते दया थोडा दिनने माटे अने आखर आयु पर्यंत कोईकने बाह्य हितकारी पण थइ शके

छे पण थावरे ते दयानु हित विणसी जाय छे तेम
के पुदगलीक दया अथिर छे अने एकांतिक सुखनु
कारण नथी वली ते पुदगलीक सुख भय भरेलु छे
अने स्यदन स्वामीनी दयाथी जे आत्मिक गुणो अने
आत्मिक स्वतंत्र सुख प्रगट थाय ते तो सादिअनत-
कालसुधी निर्भय निराकुल अचल परम स्वतंत्र
सुखनु कारण छे माटे प्रभु परम कृपाल छे प्रभुजी
आपो जगत्मां शोभा पामेला छो ते पाताल मनुष्य
अने स्वर्गोमां भुवनपतिओ मनुष्यो व्यंतरा विद्या-
धरो गणधरो मुनिव वैमानिका अने नरनारीओना
थोक जेना गुणोनी स्तवना शोभा हमेशा कर्या
करे छे भविजीयोने शुद्ध बोधना दातार छो, केवल
ज्ञान केवलदर्शने करी देदिप्यमान छो सर्व जावोना
देदक्षा परम दयालु छे अनादि जीवो पुदगल गुण
पर्यायरूप परपद ग्रहण करवाथी पहले परिग्रह वडे
कर्म बांधे छे ते परिग्रह तो निश्चयथी परवस्तुने
ग्रहपणे ग्रहवु ते एक अभेदपणे जाणवो अने
व्यवहारथी बाह्य परिग्रह नवविधे तथा अंतर परि-
ग्रह चोद विधे छे पुदगलिक अथिर पदार्थने ध्याता
चित्त थिरता पामतु नथी अने चलचित्तवालो,

रुधिर आत्मिक धर्मने पामी शकतो नथी पुद्गल परिणति पोते जड एटले अचेतन छे अने चलके० उत्कृष्टि असख्यात समयथी वधारे स्थितिवाळी नथी वळी अनता जीवोए अनता पुद्गल द्रव्यने अनती वार लीधा अने विष्ठा मूत्र रस रुधिर मांस मेद अस्थि मज्जा वीर्यादिरूपपणे परिणमाव्या अने वारवार मृतरूपगे छाडया तो एवी अथिर परिणतिना पाछल जे जीवो लाग्या ते केम थिरता पामे? अने तेनु मन वचन काया निवृत्ति पामे नहि तो न आत्मधर्म अने ते धर्मनु निवृत्तिरूप सुख केम पामे? एवी रुधिर पुद्गल परिणति पाछल जे लागे तेनु वीर्य कपायमान थाय अने शुद्धात्म गुणमां रति स्थिरता समाधि पामे नहि ॥ १ ॥

निरमल दर्शन ज्ञान चरणमय आतमारे ॥ निजपद रमणे प्रगटे पद परमातमारे ॥ पद० मोहादिकमा तल्लीन तन्मय ते कह्योरे ॥ शुद्ध ब्रह्मामा तल्लीन तिण शिवपद लह्योरे ॥ तिण० ॥ २ ॥

अर्थ –जो आत्मा पुद्गलद्रव्यनीममता छोडी पोतानु स्वरूप जूवे तो निर्मल ज्ञान दर्शन चरणमय पोतेज छे, एम जाणी पररमण छोडी शुद्ध स्वरूप रमण करे तो पोतानु परमात्मपद प्रगट थाय जे जीव मोहादिक जे, जे विभाव अगर स्वभावमा जे समय तल्लीन ने ते समय तन्मय थ० ते मय तेने कहीए जेम क्रोधमा तल्लीन थयलो क्रोधमय कहीए, काममा तल्लीन थयलो कामी-काममय कहीए अने शुद्ध धर्ममा तल्लीन थयलो शुद्ध धर्ममय कहीए पन.–"परिणमदि जेण दव्व, तक्काल तम्मयत्ति पणत्त तह्मा धम्म परिणदो, आदा धम्मो मुणयव्वे" ते माटे शुद्धात्म ब्रह्म स्वरूप मा तल्लीन थएलो आत्मा शुद्ध ब्रह्मरूप थाय एटले तेज आत्मा शिवपद पाम्यो कहीए ॥ ७ ॥

पुद्गल परिणति भिन्न आरमथी जे सदारे ॥ छोडी तास विकल्प रहो निजगुण मुदारे ॥ रहो० ॥ तप सजम मय सहज भाव निज ध्याईए रे ॥ निर्मल ज्ञानानद परम पद

ईए रे परम० ॥ ३ ॥

अर्थः-पुद्गल परिणति सर्व काले अ त्मार्थी भज छे आत्मानां अने पुद्गल परिणतिनां भिन्न लण जाणी पुद्गल परिणति सर्वथीनो शुभाशुभ फल्प तथा तेना शुभाशुभपणाना आलाप तथा अर्थे शुभाशुभ क्रिया छोडी निजात्म गुणमाहे मोदित रहे आत्मा निर्मल निज स्वरूप जाणी दुगल ममता छोडे लो पुद्गल भोगोनी ईच्छा न ाय अने पोताना ज्ञान दर्शन चरणमय स्वरूपमा मृत रहे तो ते आत्मा तप स्वयज छे अने पोताना शुद्ध स्वरूपने सदा अखड उपयोगमा राखे ना आत्मा पोतेज सजम रूप छे एटले तप सजममय उपाधि रहित आत्मिक सहज भाव अखंड समय धारीए तेथी निर्मल ज्ञानानदमय पोतानु स्वतंत्र परम पद पामीए ॥ ३ ॥

स्यादवादमय शुद्ध प्रभु मुख देशनारे ॥ सन्माने ते करे विभाव प्रवेश ना रे ॥ विभाव० ॥ जिनवाणी सन्मान विना अत्र वास छे रे ॥ पर परिणति सन्मान कर्म अठ

पास छे रे ॥ कर्म० ॥ ४ ॥

अर्थः-प्रभु मुखनी स्यात्‌वादमय शुद्ध देशना छे के जेथी शुद्ध साध्य अने साधना साक्षातकार जणाई शके छे ते आज्ञाने जे भवि बहु सन्माने आदरे ते वर्णादि रागादि विभावमां प्रवेश पर नहि ज्यासुधी जिन वचननु सन्मान आव्यु नथी त्यासुधी दुःखे भरेलो भवयाम कायम छे अने परपरिणति सन्माने एटले परग्रहणेज आठे कर्मनी पास छे ॥ ४ ॥

आतम शक्ति स्वतंत्र लखो जिन वाणथीरे ॥ सावो शिव मग शुद्ध शुक्ल द्रढ ध्यानथीरे ॥ शुक्ल० ॥ शुद्ध नये लखि द्रव्यने निस्पृह अन्यथीरे ॥ समभावे निज ध्यान तसु भव भय नथीरे ॥ तसु० ॥ ५ ॥

अर्थ-आत्म शक्ति परतंत्र नथी पण पोते आत्म शक्ति जाणी नथी त्यासुधी पुद्गल ममत्व वडे पोते अनंत परतंत्रता भोगवे छे हवे अवसर मल्यो माटे जिनेश्वरना स्याद्वाद उपदेशथी आत्म

चिना हृदयमा धारो अने परद्रव्य उपरनो राग द्वेष छोडी ज्ञान दर्शन चरणादिकमा सम एटले सुधी राग द्वेपनी मरोड अने चपलता वगरनो थिर भाव राखो आत्म शुद्धतानो अनुभव रस चाखो आत्म शुद्धतानो स्वाद चाखवानो-रस लेवानो अभ्यास वधारवो ते अनुभव करीए ज्यासुधी पुद्गलीक स्वादनो अनुभव करीए त्यासुधी शुद्धात्म अनुभव आवे नहि माटे पुद्गलीक अनुभव अथिर अहितकारी जाणी तजी आत्म शुद्धता रस लेवानो अनुभव अभ्यास करो साध्य निरपेक्षपणे जे जे वचनो होय ते तीर्थंकरोना अथवा तो ज्ञानीउना नथी माटे तीर्थंकरोना वचन परखवा माध्य सापेक्षतानो विचार हृदयथी चूकवो नहीं देवोमां चद्रमा समान स्वदन जिनेश्वरना वचनामृत रस पाननी उत्तम सेवा मनसुखे आदरे ते शिवत्रियनो स्वामी थाय अने तेने काई प्रकारनी उणता रहे नहि अने अमाप सुखमा शाश्वत वरवास करे ॥ ७ ॥





विना समभाव सहित ज्ञान,ध्यान अने क्रिया तेज साचा मोक्ष हेतु छे ज्ञान दर्शन चरणनु विषमपणु टाली सम अने थिरपणु साधवु छे एवो शुद्ध साध्य जाण्या विनानी शून्य क्रिया कष्टथी मोक्षपद नथी अने समभाव तो परग्रहण बुद्धि तजवाथी आवे माटे परग्रहण बुद्धि तजी परद्रव्यादिथी निस्पृह थई मुक्तिसुख रागीज तोज समभाव आवे अने सकल कार्य सिद्ध थाय एम स्यदनजिन देवे परम उपकार बुद्धिए उपदेश्यु ते हमारा सरखा भविक उपर तेमनो परम उपकार छे ॥ ६ ॥

शुद्ध साध्य सापक्ष सुनय वाणी लखोरे । समभावे शुद्धातम अनुभव रस चखोरे ॥ अनुभव० ॥ देवचद्र प्रभु वचन मृत रस पानमारे ॥ मनसुख शिवघर वास सूख अमानमारे ॥ सूख० ॥ ७ ॥

अर्थ -तीर्थकरोनी वाणी शुद्ध साध्य सापेक्ष ताए होय छे तो परमेश्वरनी वाणी शुद्ध साध्य सापेक्षताए सुनये जाणो एटले एकात नयनो खेच

चिना हृदयमा धारो अने परद्रव्य उपरनो राग द्वेष छोडी ज्ञान दर्शन चरणादिकमा सम एटले सुधां राग द्वेषनी मरोड अने चपलता वगरनो थिर भाव राखी आत्म शुद्धतानो अनुभव रस चाखो आत्म शुद्धतानो स्वाद चाखवानो-रस लेवानो अभ्यास वधारचो ते अनुभव कहीए ज्यासुधी पुदुगलीक स्वादनो अनुभव करीए त्यासुधी शुद्धात्म अनुभव आवे नहि माटे पुदुगलीक अनुभव अथिर अहितकारी जाणी तजो आत्म शुद्धता रस लेवानो अनुभव अभ्यास करो साध्य निरपेक्षपणे जे जे वचनो होय ते तीर्थंकरोना अथवा तो ज्ञानीउना नथी माटे तीर्थंकरोना वचन परखवा माध्य सापेक्षतानो विचार हृदयथी चूकवो नहीं देवोमां चद्रमा समान स्यद्न जिनेश्वरना वचनामृत रस पाननी उत्तम सेवा मनसुखे आदरे ते शिवप्रियनो स्वामी थाय अने तेने काई प्रकारनी उणता रहे नहि अने अमाप सुखमा शाश्वत घरवास करे ॥ ७ ॥



॥ अथ चउविंशतिम सप्रति जिन स्तवन ॥

सप्रति जिनवर पद नमी भवि ध्यावोरे ॥ साधो शुद्ध निज साध्य परम पद पावोरे ॥ अतित समय चोवीशमा ॥ भ० ॥ प्रभु सम हो निरुपाध्य ॥ प० ॥ १ ॥

अर्थः-गत चोविशीना चोविशमा तीर्थंकर सप्रति जिनवरना पद कमलना नमस्कार करी हे भवि जीवो ! तमे सिद्ध समान निज शुद्ध साध्य ध्याउ, साधना कारक प्रवृत्तिए करीने शुद्ध साध्य साधा-सिद्ध करो मन वचन काय त्रणे योग थिर करी स्वपरिणति शुद्ध साध्यमा एकत्वपणे लयलीन करी निर्मल ध्याने शुद्ध साध्य ध्याउ के जेथी शाश्वत परमात्म पद पामो एटले प्रभुजी समान उपाधि रहित थाउ ॥ १ ॥

शुद्ध साध्य जाणयाविना भवि० ॥ साध्या साध्य अनेक ॥ प० ॥ आणा विण निज छद्यी भवि० ॥ सुख पाम्यो नहि छेक ॥ प० ॥ २ ॥

अर्थः-शुद्ध साध्य जाण्याविना असाध्य एहवी पुद्गल परिणति जे स्त्री, पुरुष, संतान, लोही, वीर्य, हाड, मांस, धन आदि साधवाने अनेक प्रकारे श्रम कर्या मन वचन बल बुद्धि प्रवर्त्तावी पण ते पुद्गल परिणति आपणे वश थई नहिं तेथी कर्म बंध करी चार गति संसार कंतारमां भम्यो दुःख मह्या अने मोक्ष साधवा स्वछंदताए अने जिन वचन आज्ञाए पुरुषोना कह्या प्रमाणे घणाए क्रिया कष्ट कर्यां अने जिन मार्गमां कह्या प्रमाणे पण साध्य शून्य एकांते क्रिया साधी तेथी केवल संसार वधार्यो अने निवृत्ति रूप साधु सुख लेश पण पाम्यो नहिं ॥ २ ॥

स्याद्वाद प्रभु वचनथी भवि० ॥ लहि शुद्धातम साध्य ॥ परम० ॥ शुद्ध साधना सेवतां भवि० ॥ नाशे सर्व उपाधि ॥ परम०॥३॥

अर्थः-प्रभुजीना स्याद्वादमय वचन सांभली शुद्धात्म साध्य जाणी शुद्ध साधना सेविए-साधीए तो सकल कर्म उपाधि नाशे ॥ ३ ॥

॥ निर्मल साध्य स्वरूप ए भवि० ॥ मुज सत्तागत एम ॥ परम० ॥ शुद्ध ध्येय निज जाणिने भवि० ॥ ध्यातां शिवपद क्षेम ॥ परम० ॥ ४ ॥

अर्थ-जेवु प्रभुजीनु शुद्ध स्वरूप छे तेवुज माहरु निर्मल साध्य माहरी सत्तागते छे ते साधि प्रगट करति भावमा लाववु एज उभेद करो पोतानो शुद्ध ध्येय जाणीने यथार्थ साधकनापणे धाईए तो क्षेमकुशले शिवपद पामीए ॥ ४ ॥

ए विण अवर न साध्य छे ॥ भ० ॥ सुखकारण जगमाहि ॥ परम० ॥ शुद्ध ध्येय निज साधवा ॥ भवि० ॥ साधन शुद्ध उछाहि ॥ परम० ॥ ५ ॥

अर्थ-सिद्ध समान निर्मल आत्म साध्य शिवाय परम स्वतंत्र सुखनु कारण जगत्मां बीजु काई साध्य नथी अने माह दृष्टिए जगत्मां जे जे रुपो साध्यो जणाय छे ते सर्वे परतंत्रता अनिवृत्ति चपलता सम्पता आदि दु:खना कारण छे एम

जाणवु निज शुद्ध ध्येय साधवा आत्मवीर्य फरीने शुद्ध साधनामा मने उच्छाह छे अने सर्व भव्यो पण एम उच्छाह उमग राखो ॥ ५ ॥

रत्नत्रयी विणु साधना ॥ भवि० ॥ निष्फल जाण सदाय ॥ परम० ॥ रत्नत्रयी शिव साधना ॥ भवि० ॥ साधि भवि शिव पाय ॥ परम० ॥ ६ ॥

अर्थः-आत्मज्ञान आत्मदर्शन आत्म स्वभावाचरण ए त्रणेने रत्नत्रय कहीए एथी भिन्न अन्य साधना सदाय निष्फल जाणवी जेम खसवाले खजोळीने सुख मानी लोउं पण एणे काई सुख साध्यु नथी. आत्माना आत्माथी अभेदपणे रहेला ज्ञानदर्शनचरण गुणो ते अज्ञान मिथ्यात्व अने मोह वडे मलिन थएला छे ते अतिचार टाली ज्ञानदर्शन चरण आराधी निर्मल करवा एज रत्नत्रय मोक्ष साधना साधि भविजीवो मोक्ष पामे छे ॥ ६ ॥

शुद्धात्म जाण्या विना ॥ भवि० ॥ परपद

ममत उपाय ॥ परम० ॥ रागादिक वश जीव ए ॥ भवि० ॥ कीधा अनेक अपाय ॥ परम० ॥ ७ ॥

अर्थः-ज्यासुधी आत्म शुद्धता जाणी नथी त्यासुधी परपदमा ममत उपजे छे तेथी राग द्वेष मोहादि वश थई जीवे पाताने अनंत दुःख उपजे एहवा उपाय खडा करया ॥ ७ ॥

तुज वाणिथी में लह्या ॥ भवि० ॥ निज गुण द्रव्य प्रजाय ॥ परम० ॥ पर गुण द्रव्य प्रजायनु ॥ भवि० ॥ ममत तजे सुख थाय ॥ परम० ॥ ८ ॥

अर्थ -तमारी वाणी वडे पर द्रव्य गुण पर्यायथी भिन्न निज द्रव्य गुण पर्याय जाण्या तथी जाणु छु के पर द्रव्य गुण पर्यायनु ममत तजवाथीज सर्वे दुष्ट अपायो नाश थई स्वतन्त्र सुख प्रगट थशे ॥ ८ ॥

जाण्यु आत्म स्वरूप में ॥ भवि० ॥ वलि कीधु निरधार ॥ परम० ॥ चरण निज गुण रमणमां ॥ भवि० ॥ तजि पर रमण प्रचार ॥ परम० ॥ ९ ॥

अर्थः—में आत्मस्वरूप जाण्यु अने सिद्धांत, नयो, प्रमाणो अने माहरी बुद्धिवडे निरधार कर्यु हवे पर रमणनो चालो तजी शुद्ध स्वभावाचरणे निज गुण रमण करु ए माहरी इच्छा छे ॥ ९ ॥

धीर वीर निज वीर्यने ॥ भवि० ॥ राखी अचल गुण ठाम परम० ॥ परसंगे चल नवि करू ॥ भवि० ॥ नहि परथी निज काम ॥ परम० ॥ १० ॥

अर्थः—धीर वीर थई निजात्म वीर्यने स्वस्वभावमा स्थिर राखी एटले ज्ञान दर्शनादि निज गुण स्थानकमा वीर्य अचलपणे राखी पुद्गलादि परसंगे वीर्य चलायमान करु नहीं केमके माहर परद्रव्यथी काई काम नथी हे मोक्षाभिलाषी भव्यो! तमे सर्वे

एज प्रमाणे शुद्ध साध्य साधो धीर पुरुषोनो एज मार्ग छे विषय कषायादिके धैर्य राखी शकता नथी ते शिवमार्ग शी रीते साधी शके? माटे वीर्य अचल राखवु एज श्रेय छे ॥ १० ॥

पुद्गल खल संगे करयु ॥ भवि० ॥ आतम वीर्य चल रूप ॥ परम० ॥ जड संगे दु:खीउ थयो ॥ भवि० ॥ थइ बेठो जड भूप परम० ॥ ११ ॥

अर्थ:-जीवोए अचेतन जड एटले खल पुद्गल संगे आत्म वीर्य चल करयु तेथी जड पुद्गलोमां मली जडतावत् जड थई बेठा तेथी अन अधिकारी छतां जड पदार्थोना अधिकारी-भूप राजा थई बेठो तेथी महान् दु:खीउ थयो ॥ ११ ॥

दर्शन ज्ञान चरण सदा ॥ भवि० ॥ आराधो तजि दोष ॥ परम० ॥ आतम शुद्ध अभेदी ॥ भवि० ॥ लहिये गुण गण पोष ॥ परम० ॥ १२ ॥

अर्थः–दरशन ज्ञान अने चारित्रने ए त्रणेना आठ आठ दोष अने प्रमाद तजी सदा आराधो आतमअंगना अने आत्मगुणना व्यवहारथी ज्ञान दर्शन चारित्र एहवा मुख्य त्रण भेद छे अने निश्चय थी आत्म रत्नत्रयथी अभेदपणे एकज छे एम त्रणे गुणो आत्माथी अभेदपणे ध्याईए तोज निर्विकल्प ध्यान अने अनंत निर्मल गुणोना पुष्ट आनंद आवे।१२।

दरशन ज्ञान विराधना ॥ भवि० ॥ तेहिज भव भय मूल ॥ परम० ॥ निज शुद्ध गुण आराधना भवि० ॥ ए शिव पद अनुकूल ॥ परम० ॥ १३ ॥

अर्थ –दरशन ज्ञान चरणमय आत्मगुण विराधना तेज कर्मबंधनु कारण अने भव भवनु मूल छे आत्माथी प्रतिकूल छे, पूर्वापर हितकारी नथी अने दरशन ज्ञान चरण आदि शुद्धात्म गुणनु आराधवु एज शिवमार्ग अनुकूल छे तो मुख्य ए भाव हृदय मा धारो, एज साध्य जाणी एनी प्रशस्तताए क्रिया आदरवी अने ए साध्यथी अप्रशस्त पणे जे क्रिया होय ते तजवी ॥ १३ ॥

## ॥ कलस ॥ हरिगीत छंद ॥

गत समयना चोवीश जिननी स्तवन चोवीशी करी। मुनि देवचंद महंत हितकर सार जश कीरती वरी ॥ द्रव्यानुयोग गभीर एहनो अर्थ जन सुगुरा लहे । मतिमंद न लहे अरथ एहनो साध्य शून्य क्रिया चहे ॥ १ ॥ में तनुमती इह अर्थ कीधो यथाशक्ति प्रमाणमा ॥ षट् सूत्र ग्रंथ प्रमाण जोई भव्य लेजो ध्यानमा । उत्सूत्र दोष दुरे करीने स्याद्वाद सुनय रसे । जे आदरे जिन वचन ते निज आत्म अनुभव रस वसे ॥ २ ॥ एकवीश स्तवनो हाथ लाध्या तीन स्तवन मल्या नही । बावीशमा शिव कर श्री जिनथी स्तवन में रचिया सही । शुध नय निक्षेप प्रमाण युक्ते अर्थ एह विचारिये । उपयोग शुद्धे थीर बुद्धे दुष्ट परिणति वारिये ॥ ३ ॥ शुद्धातम परिणति आदरी उपयोग थिरता राखिये ॥ निज ज्ञान दरशन चरण वीरज सुमति अनुभव चाखिये। उगणीश पासठ फाल्गुणे सुदि पुनम इंदु निरमलो मन रंगशुं ए अर्थ करता आत्मगुण लह्यो ऊजलो ॥ ४ ॥ जिन आणसंगी तत्त्व रंगी भव्यना आग्रह वडे । दाहोद नगरे अर्थ कीधो भव्य धर्म रसे चडे।

द्रव्यानुरोग दुरे करे सवि पाप ताप संतापने । शिव
भग "मनसुख"रग विलसे लहो आप प्रतापने ।५।

( संपूर्ण )



## ॥ कलस ॥ हरिगीत छंद ॥

गत समयना चोवीश जिननी स्तवन चोवीशी करी । मुनि देवचंद महंत हितकर सार जश कीरती वरी ॥ द्रव्यानुयोग गभीर एहनो अर्थ जन सुगुरा लहे । मतिमंद न लहे अरथ एहनो साध्य शून्य क्रिया चहे ॥ १ ॥ मे तनुमती इह अर्थ कीधो यथा-शक्ति प्रमाणमा । बहु सूत्र ग्रंथ प्रमाण जोई भव्य हेजो ध्यानमा । उत्सूत्र दोष दुरे करीने स्याद्वाद सुनय रसे । जे आदरे जिन वचन ते निज आत्म अनुभव रस वसे ॥ २ ॥ एकवीश स्तवनो अर्थ लाध्या तीन स्तवन मल्या नहीं । बावीशमा शिव कर श्री जिनथी स्तवन में रचिया सही । बुध नय निक्षेप प्रमाण युक्ते अर्थ एह विचारिये । उपयोग शुद्धे थीर बुद्धे दुष्ट परिणति वारिये ॥ ३ ॥ शुद्धात्म परिणति आदरी उपयोग थिरता राखिये ॥ निज ज्ञान दरशन चरण वीरज सुमति अनुभव चाखिये । उगणीश पासठ फाल्गुणे सुदि पुनम इंदु निरमलो मन रंगथ्री ए अर्थ करता आत्मगुण लह्यो उजलो ॥ ४ ॥ जिन आणसंगी तत्त्व रंगी भव्यना आग्रह थकी । दाहोद नगरे अर्थ कीधो भव्य धर्म र[illegible] ।

द्रव्यानुरोग दुरे करे सवि पाप ताप संतापने। शिव
अग "मनसुख"रग विलसे लही आप प्रतापने।५।

( सपूर्ण )

